महिला सवाल पर हमारा दृष्टिकोण

"केवल समस्त मानव जाति की मुक्ति के द्वारा ही सर्वहारा अपनी अन्तिम मुक्ति हासिल कर सकता है"

– कार्ल मार्क्स

"सर्वहारा तब तक सम्पूर्ण आज़ादी हासिल नहीं कर सकता जब तक वह महिलाओं के लिए पूर्ण आज़ादी नहीं जीत लेता"

– वी॰ आई॰ लेनिन

"महिलाएं अपने कंधे पर आधा आसमान उठाई हुई हैं और उन्हें हर हालत में इसे जीतना चाहिए"

– माओ

विषय सूची

प्रस्तावना 1

भाग –1

विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं में महिलाओं की स्थिति और पितृसत्ता

I महिलाओं की गुलामी व पितृसत्ता की उत्पत्ति और विकास 3
1. सामन्ती समाज में महिलाओं की स्थिति और सामन्तवाद के तहत पितृसत्ता 6
2. पूंजीवाद समाज में महिलाओं की स्थिति 7
3. अर्द्धऔपनिवेशिक–अर्द्धसामन्ती समाज में महिलाओं की स्थिति 12
II आधार, ऊपरी ढांचा और पितृसत्ता 16

भाग –2

अर्थव्यवस्था

उत्पीड़न और मुक्ति के आर्थिक पहलू 20
1. घरेलू काम 20
2. सामाजिक उत्पादन 22
3. परिवार और विवाह 24

भाग –3

संस्कृति

I पितृसत्तात्मक संस्कृति और लिंग विभाजन का प्रभुत्व 29
1. शिक्षा 30
2. मीडिया 30
3. धर्म और धार्मिक श्रेष्ठतावाद 31
4. जाति 33
5. कानून 34
6. मातृत्व 35
7. विधवा, अविवाहित और एकल महिलाएं 37
8. लैंगिक रूढ़िवादिता 38
II पितृसत्ता की यौन नैतिकता 39

भाग –4

राजनीति

I	महिलाओं के प्रति हिंसा	43
II	राजनीतिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी और पितृसत्ता	44
III	महिला आन्दोलन में मुख्य राजनीतिक धाराएं	47
	बुर्जुआ उदार नारीवाद	47
	समाजवादी नारीवाद	47
	अन्तरराष्ट्रीय महिला आन्दोलन में समाजवादी धारा	50
IV	भारत में महिला आन्दोलन में प्रधान प्रवृत्तियां	51
	सामाजिक सुधार आन्दोलन	51
	समकालीन प्रवृत्तियां	52
V	नव जनवादी महिला आन्दोलन	56
	तात्कालिक कार्यभार जिन पर नव जनवादी क्रान्ति के हिस्से के रूप में महिलाओं को गोलबन्द किया जाए	62
	क्रान्ति के बाद के दीर्घकालीन कार्यभार	63
VI	समाजवादी महिला आन्दोलन	64
VII	क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन की सही दिशा	68
VIII	एक महिला आन्दोलन के निर्माण में हमारी पार्टी के प्रयास	70

प्रस्तावना

किसी भी क्रान्ति की तरह भारत की नव जनवादी क्रान्ति की सफलता और विश्व समाजवादी क्रान्ति की जीत के लिये महिलाओं की चेतनशील भागीदारी का सवाल निर्णायक महत्व रखता है। फिर हर किस्म के वर्गीय शोषण व उत्पीड़न तथा पितृसत्तात्मक शोषण-उत्पीड़न से महिलाओं की सच्ची मुक्ति के लिए भी क्रान्ति में उनकी हर तरह से चेतनशील भागीदारी निर्णायक महत्व रखती है। इसके लिए जरूरी है कि क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी महिला सवाल को ठीक-ठीक संबोधित करे। पार्टी से लेकर फौजी संगठनों व जनसंगठनों में ऊपर से लेकर नीचे तक महिला सवाल पर विभिन्न किस्म के गैरसर्वहारा दृष्टिकोणों की अभिव्यक्तियाँ स्पष्ट दिखती हैं। महिला सवाल को देखने का पुरूषवादी सामंती नजरिया तथा निम्न पूंजीवादी नारीवादी नजरिया दोनों ही स्पष्ट दिखते हैं। हालांकि पुरूषवादी सामंती नजरिया ही इसमें प्रधानतः दिखता है। ऐसे में व्यापक महिलाओं को जागृत और संगठित करने के साथ-साथ महिलाओं में अपने अधिकारों के बारे में पनपती जागृति को संगठित रूप देना और उन्हें क्रान्तिकारी आन्दोलन में शामिल करना हमारा फर्ज है। इस तरह व्यापक संख्या में महिलाओं को लोकयुद्ध में शामिल करने तथा उनके बीच से कम्युनिस्ट संगठनकर्त्ताओं, नेताओं, योद्धाओं व कार्यकर्त्ताओं की भारी बहुसंख्या को विकसित व संरक्षित करने के लिये जरूरी है कि उपरोक्त दोनों गैरसर्वहारा प्रवृत्तियों के विपरीत सर्वहारा दृष्टिकोण से, वर्गीय दृष्टिकोण से महिला सवाल को ठीक-ठीक संबोधित व विश्लेषित किया जाय। साम्राज्यवाद-सामंतवाद का खात्मा पितृसत्ता के खिलाफ के संघर्ष से जुड़ा हुआ है। फिर पितृसत्ता का खात्मा भी साम्राज्यवाद और सामंतवाद को उखाड़ फेंकने के लिए पुरूषों के साथ कंधा से कंधा मिलाकर क्रान्तिकारी युद्ध में महिलाओं की व्यापक बहुसंख्या के भाग लेने के सवाल से जुड़ा हुआ है, समाजवाद की स्थापना के संघर्ष की ओर बढ़ने के सवाल से जुड़ा हुआ है। ऐसे में सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी के लिए अत्यन्त जरूरी है कि वह महिला सवाल को सर्वहारा नजरिये से संबोधित करते हुए महिलाओं के शोषण व उत्पीड़न का एक व्यापक सैद्धांतिक व ऐतिहासिक जायजा ले और उनके लिए उचित कार्यभार तय करे। जरूरी यह भी है कि उनकी, खासकर मेहनतकश महिलाओं की पहलकदमी को, उनकी सृजनात्मक क्षमता को, सदियों से संचित उनके आक्रोश व गुस्से को सही दिशा दी जाए और उन्हें क्रान्ति के दिशा में उन्मुख किया जाय। आइये, हम

''महिलाएं नहीं तो क्रान्ति नहीं'' और ''क्रान्ति नहीं तो महिला मुक्ति नहीं'' के नारों पर गोलबंद हों ! आइये, हम महिला मुक्ति की सच्ची राह पर उन्हें आगे बढ़ाने के लिए और पार्टी तथा क्रान्ति में उनकी भारी बहुसंख्या को उतारने व आगे बढ़ाने हेतु भरपूर पहल लें!

केन्द्रीय कमेटी

6 दिसम्बर 2007 **भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)**

भाग – 1

विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं में महिलाओं की स्थिति और पितृसत्ता

महिलाएं समाज का आधा हिस्सा हैं। उनके क्रांति में उतरने से हमारी ताकत दुगुनी होती है। नहीं उतरने से आधी रह जाती है। महिलाओं के संचित आक्रोश को क्रांति की आत्मगत शक्ति में तब्दील करना और उनकी समूची उर्जा को इसमें सही ढंग से लगा देना हमारे सर्वप्रमुख कार्यभारों में से एक है। इसके लिए मौजूदा अर्द्धऔपनिवेशिक–अर्द्धसामंती समाज में उनकी आम स्थिति के साथ–साथ उनकी अपनी विशिष्टताओं पर भी गौर करना और उस आधाार पर उनके बारे में कार्यभारों को तय करना जरूरी है। इसके लिए उनकी अपनी विशिष्टताओं के मद्देनजर सबसे पहले वर्गीय शोषण व उत्पीड़न के उद्‌भव के साथ–साथ ही उनपर लदे पितृसत्तात्मक उत्पीड़न की भी ऐतिहासिक पड़ताल जरूरी है। जरूरी यह भी है कि विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं में उनकी स्थिति का ऐतिहासिक रूप से जायजा लिया जाय।

I. महिलाओं की गुलामी व पितृसत्ता की उत्पत्ति और विकास

महिलाएं दोहरे शोषण व उत्पीड़न का सामना करती हैं। अपने पुरुषों की तरह ही वे भी वर्गीय शोषण व वर्ग उत्पीड़न सहती हैं पर साथ ही साथ उन्हें पितृसत्तात्मक उत्पीड़न का सामना भी करना पड़ता है। महिलाओं के ऊपर पुरुषों के प्रभुत्व की व्यवस्था पितृसत्तात्मक है। सभी शोषणकारी समाजों के शासक वर्ग पितृसत्तात्मक उत्पीड़न को संस्थागत रूप देते हैं। परन्तु इसके अलावा वे पुरूष भी जो स्वयं शासक वर्गों द्वारा उत्पीड़ित होते हैं, पितृसत्तात्मक विचारों से प्रभावित हैं। महिलाओं के उत्पीड़न का यह एक महत्वपूर्ण पहलू है। पितृसत्तात्मक पूर्वाग्रहों के सर्वव्यापी होने में इस पहलू का योगदान है। इस तरह, जहां वर्ग उत्पीड़न को समझना ज्यादा आसान है और लोग उसको समझने के लिए ज्यादा तैयार रहते हैं, पितृसत्ता को समझना ज्यादा मुश्किल व जटिल हो जाता है। वर्ग उत्पीड़न और पितृसत्ता एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। पितृसत्तात्मक शोषण व उत्पीड़न वर्गीय शोषण व उत्पीड़न पर आधारित होता है और उसी द्वारा पालित–पोषित होता है। फिर वर्गीय शोषण व उत्पीड़न को पितृसत्ता द्वारा भी बल मिलता है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि पितृसत्ता का उद्‌भव वर्ग समाज के उद्‌भव के साथ ही हुआ है और नव जनवाद–समाजवाद के

रास्ते वर्गविहीन समाज, साम्यवादी समाज के निर्माण के लिए वर्ग संघर्ष की प्रक्रिया के दौर से ही पितृसत्ता का अंतिम रूप से खात्मा संभव है। अत: पितृसत्ता विरोधी संघर्ष को अवश्य ही ऐसे वर्ग संघर्ष की दिशा में और उसी के एक अंग के बतौर संचालित करना होगा, वर्तमान नव जनवादी क्रांति के एक अंग के बतौर संचालित करना होगा। हर समय, इस जीवंत अन्तरसम्बन्ध को समझना चाहिए और इस प्रकार का एक द्वन्द्वात्मक रुख, महिला सवाल पर मार्क्सवादी समझ का मूल बिन्दु है।

हमारे मार्क्सवादी शिक्षकों में, फ्रेडरिक एंगेल्स ने महिला सवाल के अध्ययन के लिए एक आधार पेश किया था। 1884 में लिखी गई उनकी रचना, *'परिवार, निजी सम्पत्ति और राज्य की उत्पत्ति'* एक पथप्रदर्शक काम है। बाकी चीजों के अलावा, यह किताब महिला उत्पीड़न के उदय का नक्शा खींचती है। यह दिखाकर कि महिलाओं का उत्पीड़न, इतिहास के एक खास समय में अस्तित्व में आया था, एंगेल्स ने पितृसत्ता के सामाजिक उदय की ओर ध्यान आकर्षित किया था। तब से यह किताब, महिलाओं की मुक्ति के लिए एक सैद्धान्तिक हथियार बन गई है। मॉरगन के शोध से लेते हुए, एंगेल्स ने स्थापित किया कि महिलाओं का उत्पीड़न, निजी सम्पत्ति के उदय के साथ शुरू हुआ यानी कि उस समय पर जब आदिम साम्यवाद टूटा और वर्ग समाज पैदा हुआ। पुरुषों के प्रभुत्व के साथ जुड़ा हुआ है एकनिष्ठ परिवार का आना, जो निजी सम्पत्ति के सुदृढ़ीकरण और हस्तांतरण के लिए औज़ार बन गया। आदिम समाज के मातृपक्षी, कबीला आधारित, गैर यहूदी समाज ने सामाजिक उत्पादन में महिलाओं की भागीदारी देखी थी। परन्तु सभ्यता में तब्दील होने की प्रक्रिया में मातृ अधिकार टूटने के साथ, महिलाओं के श्रम का सामाजिक चरित्र टूट गया। वह व्यक्तिगत और घरेलू परिधि तक सीमित हो गया। मातृपक्ष के स्थान पर पितृपक्ष आ गया और मातृ अधिकार उखाड़ दिया गया तथा उसका स्थान पितृसत्ता और पितृसत्तात्मक उत्पीड़न ने ले लिया। एंगेल्स ने इस बदलाव का निचोड़ इस प्रकार निकाला : **"मातृ अधिकार को उखाड़ फेंकना, स्त्रियों की विश्व-व्यापी ऐतिहासिक पराजय थी। घर में भी, आदमी ने नियंत्रण संभाला, महिला को नीचा दर्जा दे दिया गया और उसे गुलाम बना दिया गया, वह पुरुष की वासना की गुलाम और बच्चे पैदा करने की मशीन मात्र बन गई।"** एंगेल्स ने आगे कहा-**''इस तरह इतिहास के पहला वर्ग विरोध एकविवाह प्रथा के अन्तर्गत पुरूष और नारी के विरोध के विकास के साथ-साथ और इतिहास का पहला वर्ग-उत्पीड़न पुरूष द्वारा नारी के उत्पीड़न के साथ-साथ प्रकट होता है।''**- *(परिवार, निजी सम्पत्ति और राज्य की उत्पत्ति)*।

यह सवाल आम रूप से सामने आता है कि पितृसत्ता का उदय पहले हुआ और वर्ग समाज बाद में विकसित हुआ। वे आर्य जैसे खानाबदोश पशुपालकों का, जो पितृसत्ता का व्यवहार करते थे तथा अन्य वर्तमान कबीलाई समाजों का उदाहरण देते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आर्य जैसे पशुपालकों में, कबीले के मुखिया पुरुष थे। ये वर्ग समाज की ओर बढ़ने के समय में थे और इसलिए इनके भ्रूण में वर्ग समाज के कुछ तत्व देखे जा सकते थे। वर्ग समाज एक ही रात में पैदा नहीं हुआ था बल्कि संक्रमणकाल के एक लम्बे समय से गुजरा था। बदलाव की इस लम्बी प्रक्रिया में हम बर्बरता के उच्चतर स्तरों में वर्ग समाज से जुड़े हुए कई पहलू देख सकते हैं। दासों को बंदी बनाना शुरू हो गया था हालांकि जिसे सही अर्थ में राज्य कहा जा सकता है, उसका उदय नहीं हुआ था। पितृसत्ता विद्यमान थी पर वह एक संस्था नहीं बनी थी।

भारत में पितृसत्ता का उदय 2600 वर्ष पूर्व हुआ, हालांकि यह प्रक्रिया काफी पहले से शुरू हो गई थी। प्राचीन भारत में पहला राज्य – 600 ईसा पूर्व मगध राज्य के अस्तित्व में आने के साथ ही स्थापित हुआ। हालांकि भारतीय महाद्वीप के उत्तरी-पश्चिमी भाग में 2500 ईसा पूर्व सिंधु घाटी सभ्यता पैदा हुई थी पर यह तांबा युग की सभ्यता थी जो टिकी नहीं और 1800 ईसा पूर्व तक नष्ट हो गई। उस समय, कई सारे अदिवासी समूह पूरे भारत में फैल गए और विकास के विभिन्न स्तरों पर थे। दक्षिणी और केन्द्रीय भारत में ज्यादातर आदिवासी समूह आदिम खेती में शामिल थे और पशुपालन पर निर्भर थे। चूंकि महिलाओं ने कृषि तक आने के सफर में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी और सामाजिक उत्पादन में सक्रिय रूप से ये शामिल थीं, अतः ये समाज मातृपक्षी थे। पशुपालन पर आधारित समूहों में, लगता है कि पितृपक्षी व्यवहार पहले ही स्थापित हो चुका था।

जिस समय पर सिन्धु घाटी सभ्यता का विघटन हुआ, उसी समय भारत में आर्यों के आगमन की शुरुआत हुई। आर्यों में पहले से ही एक पितृपक्षी समाज मौजूद था, हालांकि महिलाएं उत्पादन में शामिल थीं। वर्ग गठन की प्रक्रिया पहले ही शुरू हो चुकी थी। ये युद्ध के जरिए पराजित समूहों को गुलाम बनाकर, युद्ध के जरिए ही फैले। 1000 ईसा पूर्व के बाद का काल, आदिम कृषि और पशुपालक समाजों के संघर्ष और बिखराव तथा वर्गों और निजी सम्पत्ति के विकास का समय है। 800 ईसा पूर्व लोहे की खोज और लोहे के हल पर आधारित खेती की शुरुआत ने इस प्रक्रिया को काफी तेज कर दिया। अतिरिक्त का उत्पादन बढ़ गया। इस समय तक शूद्र रखने की व्यवस्था (यानी शूद्र श्रम पर आधारित एक उत्पादन प्रणाली) पर आधारित

पहला राज्य गंगा के मैदान में उभरा। पितृसत्ता अच्छी तरह से स्थापित हो चुकी थी, सामाजिक उत्पादन में महिलाओं ने अपना महत्व खो दिया था और एक निचले दर्ज़े पर उन्हें गिरा दिया गया था। सामन्तवाद के उदय के साथ भारत में पितृसत्ता ने पूरी तरह संस्थागत रूप धारण कर लिया था। और इस तरह महिलाएँ सामंती वर्ग–उत्पीड़न व शोषण के साथ–साथ पितृसत्ता का शिकार होकर गुलामी की स्थिति में चली गईं।

1. सामन्ती समाज में महिलाओं की स्थिति और सामन्तवाद के तहत पितृसत्ता

भारत में करीब ईसा बाद चौथी शताब्दी से, उत्पादन की सामन्ती प्रणाली अस्तित्व में आई। सामन्तवाद का अर्थ था बटाईदारों और बन्धुआ मजदूरों का प्रत्यक्ष शोषण करने वाले जमींदारों के एक वर्ग का अस्तित्व। सामन्ती प्रणाली में, महिलाओं के लिए सम्पत्ति पर स्वामित्व या उत्तराधिकार के अधिकार पर या उत्पादन के साधनों पर किसी भी नियंत्रण पर मनाही थी। जहां उच्च वर्गों की महिलाएं, चारदीवारी के अन्दर रहती थीं, वहीं सामन्ती वर्ग बटाईदारों, बन्धुआ मजदूर वर्गों और दस्तकार जातियों की महिलाओं के श्रम का शोषण करते थे। महिलाओं का स्थान मवेशी के समान समझा जाता था। महिला का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं था। उसकी पहचान, उसके पिता, पति या बेटे के जरिये होने लगी। जमींदारों के लिए मेहनत करने के लिए, बटाईदारों और बन्धुआ मजदूर वर्गों की महिलाओं को अपने पतियों के साथ जाना पड़ता था। इस प्रकार उत्पीड़ित वर्गों की महिलाएं सामाजिक उत्पादन में भागीदारी करती थीं। उन्हें दोहरे शोषण व उत्पीड़न का शिकार होना पड़ता था। एक ओर घरेलू हाड़–तोड़ श्रम के जरिये वे पतियों, बच्चों व पिताओं को इस लायक तैयार करती थीं जिससे कि वे सामन्ती मालिकों की सेवा कर सकें। साथ ही उनके लगुआ के रूप में वे उस खास मालिक के यहाँ सारा घरेलू काम निपटाती थीं और उत्पादन श्रम में भी हिस्सा लेती थीं। पुरूष के लगुआ के रूप में उनके इस श्रम की न कोई खास पहचान थी न कीमत। उनके इस श्रम को पति, पिता या पुत्र के श्रम के सहायक श्रम के रूप में देखा जाता था। दूसरी ओर, वे महिला मेहनतकश के रूप में दूसरे सामंती मालिकों के यहाँ ऐसे कृषि कार्यों में भी भाग लेती थीं जिन्हें महिलासुलभ कार्य माना जाता था जैसे निकौनी, धान की रोपाई आदि। वहाँ उनका वर्गीय शोषण व उत्पीड़न होता था। मेहनतकश महिला के रूप में इस तरह सामंती समाज में मेहनतकश महिलाएँ पितृसत्तात्मक संबंधों के जरिए सामंती शोषण व उत्पीड़न और महिला मेहनतकश के रूप में वर्गीय शोषण व उत्पीड़न–इन दोनों प्रकार के शोषण व उत्पीड़न को झेलने को विवश थीं। सामन्तवाद में पितृसत्ता, महिला या

उसके श्रम को कोई विशेष सामाजिक पहचान नहीं देती थी। पितृसत्तात्मक विचारधारा सामन्ती वर्गों के लिए मेहनतकश महिलाओं की मुफ्त या अत्यन्त सस्ती श्रम सेवा सुनिश्चित करती थी। हिंसा, शारीरिक बेइज्ज़ती और धर्म द्वारा मान्यता दिए गए यौन–बन्धन में निर्वासन के अलावा सामन्ती अर्थव्यवस्था में महिलाओं का इस प्रकार का मुफ्त व अत्यन्त सस्ता शोषण हासिल किया जाता था। सामन्तवाद का महिलाओं के प्रति रुख सबसे अच्छी तरह से मनु के *'धर्मशास्त्र'* में दिया हुआ है। शूद्र रखने की व्यवस्था के कमजोर पड़ने और सामन्तवाद की नई प्रणाली के उदय के समय पर आने वाला *'मनुधर्मशास्त्र',* भारत में सामन्ती विचारधारा व पितृसत्ता का इच्छापत्र बन गया और उसको संस्थागत करने में इसने अह्‌म भूमिका निभाई।

सामन्तवाद में परिवार, उत्पादन और उपभोग, दोनों की इकाई था। सामन्तवाद की प्राकृतिक अर्थव्यवस्था लघु उत्पादन पर आधारित थी। वस्तु उत्पादन नाममात्र था इसलिए परिवार कृषि के साथ कई और हस्तकला तथा छोटे–मोटे काम साथ में करता था। इन कामों और घरेलू काम में कोई विभाजन रेखा नहीं थी और यह चक्र अन्तहीन था। इस प्रकार घरेलू काम का क्षेत्र बहुत बड़ा था और इसमें महिला के श्रम का काफी बड़ा हिस्सा लग जाता था।

चूंकि उत्पादन लघु स्तर पर था, परिवार, उत्पादन और उपभोग दोनों की आर्थिक इकाई था और घरेलू कामों में महिला के श्रम का बड़ा हिस्सा लगता था, अतः वर्चस्व और अधीनता का पितृसत्तात्मक ढांचा, केवल परिवार के अन्दर ही नहीं, बल्कि पूरे सामन्ती समाज का मुख्य पहलू बन गया। लेनिन ने बताया, **"पितृसत्तावाद लघु–उत्पादक अर्थव्यवस्था का एक हिस्सा है।"** सामन्तवाद में, पितृसत्ता और परिवार के ढांचे के साथ उसके सम्बन्ध का यह दूसरा बड़ा आर्थिक पहलू था।

2. पूंजीवाद समाज में महिलाओं की स्थिति

पश्चिम में पूंजीवाद का विकास महिलाओं के जीवन में कई बड़े बदलाव लाया। इसने महिलाओं को सामन्ती अकेलेपन और बन्धन से बाहर आने में मदद की और उनके विश्व दृष्टिकोण और मूल्यों को तब्दील कर दिया। पूंजीवाद के उदय ने, महिलाओं के बीच जनवादी आकांक्षाओं को जगाया, समानता और मुक्ति के विचारों को जगाया और अपने जनवादी अधिकारों के दावे के लिए आन्दोलनों को पैदा किया। ये ऐसी चीजें थीं, जो सामन्ती समाज में सुनी नहीं गई थीं। इसने यौन सम्बन्धों में भी यह कुछ हद तक आजादी लाई, जैसे हमसफरों का मुक्त चयन, जो निश्चित तौर पर, वर्ग परिधि से निर्धारित होता है और तलाक का अधिकार आदि। पर महिलाओं से अतिरिक्त को खींचने के लिए पूंजीवाद ने उनके वर्गीय शोषण व

उत्पीड़न के साथ-साथ पितृसत्ता की संस्था पर भी निर्भरता कायम रखी। इस प्रकार, पूंजीवाद ने पितृसत्ता की संस्था को खत्म नहीं किया, पर पितृसत्तात्मक उत्पीड़न के रूपों को बदल दिया। पूंजीवाद द्वारा लाए गए आर्थिक बदलावों में सबसे महत्वपूर्ण था सामाजिक उत्पादन में बड़े स्तर पर महिलाओं को लाना। महिलाएं अब अपने पतियों के सहायक के रूप में काम नहीं करती थीं। पूंजीपति, उन्हें आत्मनिर्भर व्यक्तियों के रूप में मजदूरी श्रम सम्बन्धों में लाए। इस प्रकार, महिलाएं अपनी मजदूरी कमाने लगीं। परन्तु यह मानना गलत होगा कि सामाजिक उत्पादन में महिलाओं की भागीदारी अपने आप में उनकी मुक्ति थी। इसके विपरीत, सामाजिक श्रम शक्ति के रूप में महिलाओं की भागीदारी, श्रम के एक नए यौन विभाजन के आधार पर व्यवस्थित हुई, जिसने पूंजीवाद में पितृसत्तात्मक उत्पीड़न के रूप को निर्धारित किया। यह पूंजीवाद, महिलाओं की मुक्ति के आन्दोलन के लिए वस्तुगत आधार तैयार करता है, उसके लिए सामाजिक और आर्थिक स्थितियों को परिपक्व करता है।

पूंजीवाद समाज में महिलाओं की गुलामी और पितृसत्ता का स्वरूप

1. पूंजीवाद ने महिलाओं को बड़े पैमाने पर उत्पादन-कार्यों में भागीदार बनाने या बनने की परिस्थिति पैदा की। इस तरह इसने उनपर वर्गीय शोषण व उत्पीड़न के स्वरूप में बदलाव भी लाया। पर इससे उनकी गुलामी की स्थिति में कोई बुनियादी बदलाव नहीं आया। न उन्हें जनवाद मिला न सचमुच की आजादी। साथ ही पितृसत्ता के बंधनों का स्वरूप भले कुछ बदला, पर वे बने रहे। इस तरह पूंजीवादी समाज में भी औरतें वर्गीय शोषण-उत्पीड़न व पितृसत्तात्मक शोषण उत्पीड़न की दुहरी चक्की में पिसती रहीं। एक तरफ वे पुरूषों से आधी या उनकी चौथाई मजदूरी पाकर पूंजीवादी शोषण व लूट का शिकार होती रहीं, दूसरी तरफ, उनके श्रम को पुरूष श्रम का सहायक व पूरक घोषित कर उसका भरपूर दोहन किया जाता रहा। इस तरह वर्गीय शोषण के साथ-साथ पितृसत्ता भी महिलाओं से अतिरिक्त निचोड़ने का एक जरिया बनी रही।

2. पूंजीवाद ने महिलाओं को सामाजिक उत्पादन में खींचा। पर ऐसा करने में, इसने पुरुषों और महिलाओं के काम में यौन विभाजन बरकरार रखा। पूंजीवाद में महिलाओं द्वारा किया गया काम, मुख्यतः उसके घरेलू काम का ही विस्तार है। उदाहरण के तौर पर, महिलाएं घरेलू नौकर, सफाई करने वाली, कपड़ा सिलनेवाली, नर्सों, स्कूल अध्यापिकाओं, क्लर्कों, सेल्स गर्ल, सैक्रेटरी आदि के रूप में काम करती हैं। जब महिलाएं, कपड़ा, खाना तैयार करने, दवाई या इलेक्ट्रॉनिक उद्योगों में उत्पादन लाइन में रोजगार में होती हैं, तब भी, इन फैक्ट्रियों में श्रम का यौन विभाजन

बरकरार रखा जाता है। निर्माण उद्योग में, कृषि आदि में, पुरुषों और महिलाओं के काम के बीच यह साफ विभाजन यथासम्भव कायम रखा जाता है। इसको विभिन्न आधारों पर जायज ठहराया जाता है। जिनमें सबसे आम यह है कि महिलायें शारीरिक मेहनत करने वाले काम के लिए सक्षम नहीं हैं, वे उन कामों को करने में बेहतर हैं जिनमें काफी "धैर्य" की जरूरत है, उनकी उंगलियां "पतली" हैं और "बारीक" शारीरिक इस्तेमाल वाले कामों को करने में वे माहिर हैं इत्यादि। इस प्रकार पूंजीवादी पितृसत्ता, सामाजिक उत्पादन में लिंग पर आधारित तथाकथित प्राकृतिक श्रम विभाजन बरकरार रखने का प्रयास करती है। यह उसके लिए फायदेमंद है कि इस तरह का "प्राकृतिक" लिंग विभाजन जारी रखा जाये क्योंकि इससे मजदूरी को आसानी से तोड़ा-मरोड़ा जा सकता है। 'कुशल', 'अर्द्धकुशल' और 'अकुशल' काम के बीच में किए जाने वाले विभाजन में भी श्रम के यौन-विभाजन का प्रतिबिम्ब है। पितृसत्तात्मक विचारधारा महिला के श्रम को *'अकुशल'* और *'अर्द्धकुशल'* का दर्जा देती है और इस तरह उसको दिए जाने वाली कम मजदूरी को जायज ठहराती है।

यह नहीं भूला जाना चाहिए कि श्रम का यह लिंग-विभाजन उत्पादन के एक क्षेत्र से दूसरे में और उत्पादन के एक खास क्षेत्र में एक इकाई से दूसरे इकाई में अलग-अलग होता है। इस प्रकार पूंजीवाद द्वारा पैदा किया गया लिंग विभाजन मनगढ़ंत है। पर इस मनगढ़ंत विभाजन के पीछे एक 'प्राकृतिक' लगने वाली खाई को जबरदस्ती लादने का एक व्यवस्थित प्रयास भी है।

3. वर्ग समाज के गठन के समय से, घरेलू काम महिलाओं का कार्यभार रहा है।

पूंजीवाद में, हालांकि एक स्वतंत्र आधार पर महिलाओं को सामाजिक उत्पादन में लाया गया, पर उनपर से घरेलू काम का भार पूरी तरह नहीं हटाया गया। इस प्रकार, पूंजीवाद में, महिलाएं सामाजिक उत्पादन तथा घरेलू काम, दोनों में शामिल रहती हैं। महिलाओं द्वारा किया जाने वाला कुल काम, पुरुषों से काफी ज्यादा है। अर्थव्यवस्था के दो क्षेत्र – सामाजिक और घरेलू लिंग विभाजन पर आधारित हैं। अभी भी घरेलू काम को आपस में बांटने के रास्ते में पितृसत्तात्मक विचारधारा खड़ी है। पुरुष सर्वहारा समझता है कि कारखाने में कमरतोड़ मेहनत करने के बाद उसका दिन पूरा हो गया। घरेलू काम में मदद करने में वह अपनी जिम्मेवारी नहीं समझता। घरेलू काम में भाग नहीं लेने की सुविधा प्रदान करके, पितृसत्तात्मक विचारधारा उसके फायदे में है। ऐसे समय में, जब महिलाएं व्यापक स्तर पर श्रमिक वर्ग में जुड़ गई हैं, यह विचारधारा लिंग के आधार पर सर्वहारा की एकता तोड़ने में योगदान पहुंचाती है।

श्रमिक वर्ग द्वारा किया गया घरेलू काम (चाहे वे महिलाएं स्वंय श्रमिक हों या नहीं) पूंजीवादी समाज की सबसे महत्वपूर्ण वस्तु – श्रमिकों की श्रम शक्ति, को भरने और पुनः जीवित करने में मदद करता है। खाना पकाकर, कपड़े धोकर, फटे कपड़े सिलकर, बीमारों की सेवा करके इत्यादि, महिलाएं श्रम शक्ति को बिक्री के लिए उपयुक्त बनाने में योगदान देती हैं।

इसके अलावा, श्रम शक्ति के पुनः उत्पादन में महिलाएं अहम भूमिका निभाती हैं। वे पैदा होने के पहले बच्चे को अपने पेट में रखती हैं, बच्चों को दूध पिलाती हैं और उन्हें पालती हैं जिससे कि वे बड़े होकर, पूंजीवादी समाज के थके हुए और बूढ़े उत्पादक शक्तियों का स्थान लेने की काबिलियत रखने वाले सर्वहारा महिला व पुरुष बन जाते हैं। इस प्रकार, महिलाओं का घरेलू काम, पूंजीवादी व्यवस्था के जिन्दा रहने और बने रहने के लिए आवश्यक है। यह पूंजीपति के लिए श्रम शक्ति को तैयार करता है और उसका पुनः उत्पादन करता है। इस प्रकार अर्थव्यवस्था के दोनों क्षेत्रों – सामाजिक उत्पादन और घरेलू काम के बीच नजदीक का अन्तरसम्बन्ध है। सामाजिक उत्पादन घरेलू काम के सहारे खड़ा है और घरेलू काम उस मजदूरी का उपभोग करके किया जाता है जो एक तरफ रोजमर्रा की जरूरतों को खरीदने के लिए पुरुष और महिला मजदूरों को मिलती है और दूसरी तरफ इन जरूरत की वस्तुओं के लिए श्रम शक्ति को भरने और पुनः उत्पादित करने के लिए महिलाओं के श्रम से आती है।

पर पूंजीवाद ने, जो महिलाओं के घरेलू काम पर भी निर्भर है, पितृसत्तात्मक विचारधारा का फायदा उठाते हुए अर्थव्यवस्था के इस क्षेत्र को महत्वहीन करार दे दिया है। महिलाओं द्वारा किए जाने वाले घरेलू काम की कोई सामाजिक इज्जत या मूल्य नहीं है। उसके लिए कोई कीमत नहीं मिलती। ऐसा दिखाया जाता है जैसे कि इसका कोई सामाजिक मूल्य नहीं है। परन्तु सच्चाई यह है कि महिलाओं का घरेलू काम, न केवल उपयोग मूल्यों बल्कि विनिमय मूल्यों को पैदा करने में भी योगदान करता है। मजदूर की श्रम शक्ति एक वस्तु है। उसका विनिमय मूल्य है और यह श्रम शक्ति मजदूर द्वारा अपनी मजदूरी से जरूरत की वस्तुओं को केवल खरीदने से नहीं बल्कि इन जरूरत की वस्तुओं को बदलने के लिए परिवार में महिला के श्रम से भी विनिमय के लिए तैयार होती है। इसलिए, यह समझा जाना चाहिए कि जहां पूंजीपति सामाजिक उत्पादन के बिन्दु पर पुरूष व महिला मजदूरों का शोषण करता है, वहीं उसी समय, महिलाओं के घरेलू श्रम का अप्रत्यक्ष शोषण करता है।

4. पूंजीवाद को श्रम की आरक्षित सेना की जरूरत है। अपनी अर्थव्यवस्था के तेज विस्तार के समय इसने महिलाओं को सामाजिक उत्पादन में खींचा। घरेलू औरतें

इसकी सामाजिक अर्थव्यवस्था में खींची जाती हैं। इस प्रकार जो महिलाएं घरेलू काम करती हैं, दूसरे शब्दों में 'घरेलू औरतें', अतिरिक्त श्रम को तैयार करने और उसे उपलब्ध कराने का स्रोत हैं। यह सुरक्षित सेना, जिसमें महिलाओं का बड़ा हिस्सा है, श्रम की आम कीमत को कम रखने और संकट के समय में श्रमिकों को हटाने के माध्यम के रूप में भी काम करती है।

5. पूंजी के संरक्षण के अधीन घरेलू उत्पादन पूंजीवादी संगठन का ऐसा रूप है जो महिला के श्रम से अतिरिक्त चूसने के लिए एकदम तैयार है।

भारत में, बीड़ी और अगरबत्ती बनाने, सिले-सिलाए कपड़े तैयार करने, मसाले, कढ़ाई, लेस बनाने इत्यादि जैसे काम, इन आधारों पर पूरी तरह या आंशिक रूप से संगठित हैं। कुछ पूंजीवादी देशों में घड़ी और इलेक्ट्रॉनिक उद्योगों को भी शामिल करने के लिए घरेलू उत्पादन का विस्तार हो गया है।

उत्पादन के इस रूप में पूंजीपति महिला मजदूरों को कच्चा माल उपलब्ध कराते हैं और तैयार वस्तु ले ली जाती है। अक्सर पूंजीपति ठेकेदारों और उप-ठेकेदारों के जाल पर निर्भर करता है। घरेलू उत्पादन पूंजीपति के लिए कई सुविधाएं प्रदान करता है। इस व्यवस्था के अन्दर मजदूर के परिवार की चेतना में पुरुष की आय में थोड़ा और जोड़ने के लिए कुछ अतिरिक्त घंटे काम करने वाली 'घरेलू-औरत' की छाप अच्छी तरह बसी हुई है। घरेलू उत्पादन उस सामन्ती पितृसत्तात्मक रुझान के साथ अच्छी तरह से मेल खाता है कि महिलाओं को घरेलू काम और बच्चों की देख-रेख तक सीमित रहना चाहिए। इसलिए पूंजीवादी उत्पीड़न का यह रूप परदा व्यवस्था के दकियानूसी सामन्ती प्रवृत्ति को सन्तुष्ट करता है। गरीब उच्च जाति की महिलाएं भी मजदूर की तरह उत्पादन लाइन में बाहर जाकर काम करने से इस रूप को बेहतर समझती हैं। इसी प्रकार मुसलमान महिला श्रमिकों के एक बड़े हिस्से का पूंजीवादी उत्पादन के इस रूप से शोषण होता है। घरेलू उत्पादन को वह पहचान नहीं मिलती है जो वैसे सामाजिक उत्पादन अपने लिए कमाता है। यह महिलाओं को उच्चतर सामाजिक या वर्ग चेतना से भी वंचित रखता है जो आधुनिक बड़े स्तर के उद्योगों से आ सकती है। दूसरी तरफ, जिस माहौल में इसका संचालन होता है, वह माहौल पूंजीपति को मजदूरी दबाने की काफी गुंजाइश देता है। इस प्रकार घरेलू उत्पादन अर्थव्यवस्था में महिलाओं का श्रम पूंजीवादी वर्गीय शोषण के साथ-साथ पितृसत्तात्मक शोषण का भी एक खास रूप बन गया है। घरेलू उत्पादन, पूंजीपति के मुनाफे को भी कई गुणा बढ़ा देता है क्योंकि इसमें कोई अतिरिक्त ढांचागत खर्च नहीं होता है।

6. पूंजीवाद महिलाओं के वस्तुकरण पर फलता-फूलता है। पूंजीवाद के एकाधिकार के चरण में यानी कि साम्राज्यवाद में, महिलाओं के शोषण के ये रूप और तीव्र रूप से व वैश्विक स्तर पर चलते रहते हैं। साम्राज्यवाद महिलाओं के श्रम का शोषण न केवल अपने देशों में करता है बल्कि उत्पीड़ित देशों में भी करता है। साम्राज्यवादी सस्ते में घरेलू काम करने के लिए उत्पीड़ित देशों से गरीब महिलाओं के प्रवसन को प्रोत्साहन दे रहे हैं। इसके अलावा, इसने पर्यटन और मनोरंजन/मीडिया उद्योगों को विकसित करके और उनसे जबरदस्त मुनाफे कमा कर महिलाओं के शरीर के वस्तुकरण को अपने चरम पर पहुंचा दिया है।

खूब मुनाफे कमाने वाला लगभग एक यौन उद्योग पैदा हो गया है जिसमें होस्टेस, आया, यौन श्रमिक और न जाने क्या-क्या नामों से उत्पीड़ित देशों की लाखों महिलाएं व लड़कियां लपेट ली गई हैं। साम्राज्यवादी वैश्वीकरण में यह सब एक नंगे रूप में प्रतिबिम्बित हो रहा है।

इस तरह ऊपर दिए गए 6 बिन्दुओं से स्पष्ट है कि पूंजीवाद, खासतौर पर साम्राज्यवादी चरण में, न केवल अतिरिक्त मुनाफे कमाने के लिए, बल्कि एक सामाजिक व्यवस्था के रूप में अपने आपको बरकरार रखने के लिए भी, मेहनतकश महिलाओं पर वर्गीय शोषण व उत्पीड़न लादने के अलावा लैंगिक आधार पर विभाजन पैदा करने के लिए पितृसत्तात्मक विचारधारा का इस्तेमाल करने का प्रयास करता है।

3. अर्द्ध औपनिवेशिक-अर्द्धसामन्ती समाज में महिलाओं की स्थिति

जब अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने भारतवर्ष पर कब्जा जमा लिया, तब हमारे देश में सामंती समाज की कोख में पूंजीवाद का विकास शुरू हो रहा था। ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने पूंजीवाद के स्वतंत्र विकास को अवरूद्ध कर दिया और भारतीय समाज, सामन्ती समाज से एक औपनिवेशिक और अर्द्धसामंती समाज में तब्दील हो गया। अंग्रेजों ने सामंतवाद की रक्षा की। उन्होंने लिंग उत्पीड़न समेत भारतीय समाज के सारे प्रतिक्रियावादी सामन्ती पहलुओं को टिकाये रखा।

महिलाओं समेत भारतीय समाज पर ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन का एक बड़ा प्रभाव पड़ा। उसकी आर्थिक नीतियों ने खेतिहर अर्थव्यवस्था और दस्तकार उत्पादन का विनाश कर दिया, जिससे लाखों लोग बेरोजगार और गरीब हो गए। महिलाओं ने भी पारम्परिक घरेलू उत्पादन में अपनी भूमिका खो दी और औपनिवेशिक शासन में लगातार अकालों तथा गरीबी और बदहाली की मार ने उन्हें सबसे ज्यादा प्रभावित किया। वेश्यावृत्ति के लिए लड़कियों की बिक्री भी व्यापक हो गई। ब्रिटिश शासन के दौरान, पितृसत्ता के सबसे प्रतिक्रियावादी रूप सुदृढ़ हुए।

उसी समय अंग्रेजों ने अर्थव्यवस्था में कुछ ढांचागत बदलाव शुरू किए। जमीन, जो निजी सम्पत्ति बन गई थी, उसका पंजीकरण केवल पुरुषों के नाम से होता था। बड़े बागानों में नकदी फसलों के उत्पादन के विकास ने गरीब तबकों की महिलाओं को मजदूर बना दिया। रेल का विकास, कपड़ा और जूट मिलों की स्थापना का अर्थ था कि मजदूरों की मांग बढ़ गई। इन उद्योगों में महिलाएं भी श्रमिक बन गईं। इस प्रकार भारत में महिला श्रमिक वर्ग 19वीं सदी के दूसरे हिस्से में पैदा हुआ। 19वीं सदी के अन्त तक ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जरूरतों ने आधुनिक शिक्षा का विकास किया। सुधार आन्दोलन के प्रभाव में ज्यादातर ऊंचे वर्गों की महिलाओं ने शिक्षा ग्रहण की और पढ़ाने व नर्स का काम जैसे व्यवसायों में प्रवेश किया।

1947 में अंग्रेजों के जाने के बाद भारत नव औपनिवेशिक किस्म के एक अर्द्धऔपनिवेशिक और अर्द्धसामंती समाज में तब्दील हो गया। सामाजिक संबंध प्रमुखतः सामन्ती बने रहे। फिर पूंजीवादी संबंध भी विकसित हुए हैं पर वे काफी विकृत और अनगढ़ (disarticulated) हैं।

महिलाओं की स्थिति पर इसका प्रभाव पड़ा। वे साम्रज्यवाद, सामंतवाद और दलाल नौकरशाह पूंजीवाद के सम्मिलित वर्गीय शोषण व उत्पीड़न का शिकार होने लगीं। उनपर जारी पुरूषतांत्रिक शोषण में भी साम्राज्यवादी-पूंजीवादी और सामन्ती दोनों पहलू रहे।

मौजूदा अर्द्धऔपनिवेशिक-अर्द्धसामंती समाज में महिलाओं, खासकर मेहनतकश महिलाओं की स्थिति अत्यन्त बदतर है। **'ढोल, गँवार, शूद्र, पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी'**- यह सर्वसामान्य कहावत आज भी भारतीय नारी की स्थिति वर्णित करती है। **'स्त्री स्वतंत्रता के योग्य नहीं'-'जिमि सुतंत्र हुई बिगरहीं नारी'** से मानो नारी की दासता को पट्टा मिल गया है। स्थापित सामाजिक मान्यता है कि नारी का सृजन विधाता ने पुरूषों की दासी के रूप में किया है - ''महिला बचपन में पिता के अधीन, शादी के बाद पति के अधीन, बुढ़ापे में पुत्र के अधीन रहेगी'' - इस कथन से दरअसल महिलाओं की अपमानजनक तस्बीर ही सामने आती है। क्रूर सामंती परम्पराओं ने ऐसी ही मजबूरी की जिन्दगी नारियों पर थोप दी है जो आज भी जारी है। दहेज-प्रथा और दहेज हत्या, भ्रूण हत्या, जोतदार-जमींदार-महाजन एवं गुंडा-पुलिस द्वारा बलात्कार व सामूहिक बलात्कार, यातनाएँ, कम मजदूरी देने, माफियाओं व ठेकेदारों के मनोरंजन व भोग की वस्तु के रूप में इस्तेमाल किये जाने की घटनाएँ बढ़ती जा रही हैं। अभी भी सामंतों-जमींदारों द्वारा महिलाओं को 'रखनी' (रखैल) के रूप में रखने, उन्हें गाली-गलौज, मारपीट करने का प्रचलन आम है। इसके

अलावा देहाती क्षेत्रों में अंधविश्वास, कुसंस्कार व कुरीतियों का शिकार मेहनतकश महिलाएँ ही ज्यादा होती हैं। ''डायन''आदि के नाम पर मध्ययुगीन अत्याचार लगातार आज भी जारी हैं।

शहरी क्षेत्र में भी महिलाएँ क्रूरतम वर्गीय शोषण-उत्पीड़न व यातना झेलने को बाध्य हैं। बहुत ही कम मजदूरी, कार्यस्थलों पर क्रूर व वीभत्स यौन-उत्पीड़न, भोग्या व ललचाने वाले 'माल' के रूप में उनका इस्तेमाल घिनौने हद तक बढ़ा है। साथ ही उनकी सामाजिक सुरक्षा भी बिल्कुल अनिश्चित हो चली है।

अर्द्धसामन्ती अर्थव्यवस्था, अर्द्धसामन्ती वर्गीय शोषण उत्पीड़न के साथ-साथ पितृसत्तात्मक उत्पीड़न का मजबूत गढ़ है। सर्वप्रथम, जमींदार वर्ग, भूमिहीन और गरीब किसान महिलाओं के श्रम का क्रूर शोषण करता है। दूसरा, कृषि में अर्द्धसामन्ती रिश्ते, लघु उत्पादन को बरकरार रखते हैं। यह घरेलू अर्थव्यवस्था के लिए आधार प्रदान करता है और इसलिए उत्पादन तथा उपभोग दोनों की इकाई के रूप में परिवार के बने रहने के लिए आधार देता है। यह महिलाओं और बच्चों की अधीनता का पितृसत्तात्मक पारिवारिक ढांचा खड़ा करता है। तीसरा, अर्द्धसामन्ती अर्थव्यवस्था जमीन के छोटे मालिकों की अनगिनत जनता पर फलती-फूलती है। यह सामाजिक उत्पादन की गुंजाइश, खासतौर पर मध्यम और अमीर किसानों की महिलाओं के बीच, को सीमित करती है। अर्द्धसामन्तवाद के ये तीन आर्थिक पहलू, अर्द्धसामंती वर्गीय शोषण-उत्पीड़न को जारी रखने के साथ-साथ पितृसत्ता को न केवल आधार में खड़ा करते हैं बल्कि ऊपरी ढांचे में भी सबसे प्रतिक्रियावादी तरीकों में सशक्त करते हैं। प्राचीन लिंग मूल्य, महिलाओं की सबसे खराब सार्वजनिक बेइज्जती, हिन्दू फासीवादियों द्वारा मध्ययुगीन सामंती महिला-विरोधी मूल्यों व संस्कृति की पुनर्स्थापना के प्रयास – पितृसत्ता की प्रतिक्रियावादी राजनीतिक सामाजिक संस्कृति के इस समूचे दायरे को यह अर्द्धसामन्ती ढांचा कायम रखता है। महिलाओं के हित में उन्हें अर्द्धसामंती क्रूर शोषण-उत्पीड़न से तथा हर प्रकार के पितृसत्तात्मक बंधन से मुक्त करने के लिए सामन्तवाद का विनाश करना होगा।

विभिन्न घुमन्तू और स्थाई जनजाति समुदायों में भी, आमतौर पर पितृपक्षी उत्तराधिकार और पितृसत्ता रहती है पर, रहती है उन रूपों में जो समूह की संस्कृति और जीवन पद्धति के लिए विशेष हैं। चूंकि इन समुदायों में निजी सम्पत्ति विकसित हो चुकी है, इनमें वर्ग समाज के बुनियादी पहलू जैसे एकनिष्ठ/बहुनिष्ठ भी हैं। आदिवासी महिलाओं को यौन आजादी मिलने की आम राय के विपरीत, इन्हें बल्कि पितृसत्तात्मक दबाव और पूर्वाग्रह का सामना करना पड़ता है। हालांकि सामाजिक उत्पादन में उनकी

भूमिका महत्वपूर्ण है और उनका श्रम मूल्यवान समझा जाता है, फिर भी महिलाओं को मुख्य उत्पादन के साधनों – जमीन और मवेशी के स्वामित्व की मनाही है। विवाह और पुनः विवाह कबीले के नियमों और रिवाजों से निर्धारित होते हैं जो महिलाओं के चयन को सीमित करते हैं। महिलाओं के लिए एकनिष्ठता सख्ती से लागू की जाती है और पति के अलावा किसी अन्य पुरुष के साथ सम्बन्ध बनाने वाली महिला को सख्त सजा दी जाती है। इसके अलावा, अलग-अलग जनजातियों के विशेष रिवाज होते हैं जिनका लक्ष्य होता है, भौंडे तरीकों से महिलाओं के अधीनस्थ दर्जे का और महिलाओं की यौनिकता व गतिशीलता पर कुलपतियों के नियन्त्रण का दावा करना। उत्तर-पूर्व के कुछ जनजाति समुदायों में, जैसे 'खासी' में, जिनमें मातृपक्ष चलता रहा था, साम्राज्यवादी प्रभाव और अपने पितृसत्तात्मक नियमों और नीतियों के साथ भारतीय राजसत्ता के हस्तक्षेप से काफी कमजोर पड़ गया है।

साम्राज्यवाद द्वारा किए गए विकृत व अनगढ़ पूंजीवादी विकास का एक प्रतिक्रियावादी चरित्र है। साम्राज्यवादियों और दलाल शासक वर्गों ने महिलाओं के एक छोटे हिस्से को सामाजिक उत्पादन में लिया है पर उनपर साम्राज्यवादी-सामंती शोषण-उत्पीड़न के साथ-साथ सबसे खराब तरीकों का पितृसत्तात्मक उत्पीड़न शुरू कर दिया गया है। पहले, इसने सामाजिक अर्थव्यवस्था में लिंग-आधारित श्रम विभाजन को स्थापित कर दिया है। दूसरा, इसने महिला श्रमिकों की मजदूरी, पुरुषों से काफी कम रखी है। तीसरा, इसने निर्यात जोनों, विशेष आर्थिक जोनों, कपड़े के क्षेत्र आदि में सबसे दमनकारी तरीके इस्तेमाल किए हैं। चौथा, इसने महिला मजदूरों से अधिकतम निचोड़ने के लिए घरेलू उत्पादन प्रक्रिया का इस्तेमाल किया है। पांचवां, इसने सामाजिक उत्पादन में महिलाओं को लेते हुए, महिला मजदूरों और कर्मचारियों के घरेलू भार को कम करने पर खास ध्यान नहीं दिया है। छठा, इसने मजदूरी के मूल्य को न्यूनतम रखने के लिए महिलाओं और बच्चों के मुफ्त घरेलू श्रम का इस्तेमाल किया है। सातवां, यह सब करने में साम्राज्यवाद और उसके दलालों ने सामन्तवाद के सबसे ज्यादा प्रतिक्रियावादी मूल्यों का इस्तेमाल किया है और हमेशा उनकी रक्षा की है।

इसके आगे, साम्राज्यवाद बेहद पतित और अक्सर यौनिक मूल्यों वाला सांस्कृतिक हमला करता रहा है। इसने न केवल महिलाओं की गुलामी व वर्गीय शोषण-उत्पीड़न व पितृसत्ता को एक नई जिंदगी दी है, बल्कि उसको और ज्यादा प्रतिक्रियावादी, हिंसक व अपराधी बना दिया है। साम्राज्यवाद ने बड़े मुनाफे कमाने के लिए यौन उद्योग को विकसित करके, बड़े स्तर पर वेश्यावृत्ति को बढ़ावा दिया है। साम्राज्यवाद और दलाल नौकरशाह पूंजी द्वारा शोषित महिलाओं, इन वर्गों द्वारा शोषित पुरुष श्रमिकों

पर निर्भर महिलाओं और भारतीय महिलाओं की व्यापक जनता जो हर रोज साम्राज्यवाद तथा उसके दलाल शासक वर्गों के क्रूर वर्गीय शोषण व उत्पीड़न और उनके द्वारा प्रायोजित पितृसत्ता की ठोकर खाती है, तब तक अपनी मुक्ति नहीं पा सकती, जब तक साम्राज्यवाद और उनके दलाल शासक वर्गों को उखाड़ नहीं फेंका जाता।

II. आधार, ऊपरी ढांचा और पितृसत्ता

महिलाओं पर जारी वर्गीय शोषण–उत्पीड़न के अलावा पितृसत्ता का स्वरूप क्या है? क्या पितृसत्ता आधार में रहती है या मात्र ऊपरी ढांचे की परिघटना है? यह एक महत्वपूर्ण सवाल है, महिला उत्पीड़न से सम्बन्धित यह एक महत्वपूर्ण अवधारणात्मक सवाल है। हमारे लिए इस सवाल के जवाब का महिला मुक्ति हेतु संघर्ष में, खासकर, पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष में सर्वहारा द्वारा इस्तेमाल की जानेवाली कार्यनीति और नारों पर भी सीधा प्रभाव है।

संशोधनवादी पार्टियों और कुछ सामाजिक नारीवादियों में महिला सवाल के बारे में एक आम चलन (practice) है – उसको एक ऊपरी ढांचे की परिघटना मानना। महिला उत्पीड़न के बारे में यह एक सतही विचार है। संशोधनवादी हालांकि इस मार्क्सवादी विचार को मानते हैं कि महिला उत्पीड़न का उदय वर्ग समाज के साथ हुआ, पर वे इसे यांत्रिक रूप से समझते हैं। उनके अनुसार समाज के शोषणकारी वर्ग आधार के प्रतिबिंब के रूप में पितृसत्ता ऊपरी ढांचे में, विचारधारा, धर्म, संस्कृति, परम्पराओं, रिवाजों, कानून, परिवार आदि के क्षेत्र में काम करती है। इसलिए वे तब तक पितृसत्ता से लड़ने के बारे में नहीं सोच सकते जब तक आर्थिक आधार क्रान्तिकारी रूप से बदलता नहीं है। उनकी धारणा है एक बार जब आर्थिक आधार बदल जाता है और एक समाजवादी आर्थिक आधार आ जाता है, पितृसत्ता भी गायब हो जाएगी। यह मार्क्सवाद को विकृत और अश्लील करता है – आर्थिक निर्धारण तक मार्क्सवाद को सरल तरीके से सीमित करता है। इस तरह एक अनजान भविष्य तक पितृसत्ता के खिलाफ लड़ाई स्थगित ही नहीं हो जाती बल्कि पूरी तरह छोड़ दी जाती है क्योंकि क्रान्ति आर्थिक आधार और उस आधार पर निर्मित पूरे ऊपरी ढांचे को बदल देगी। कुल मिलाकर इसका प्रभाव इस रूप में पड़ता है कि व्यवहार में वर्ग संघर्ष और महिला मुक्ति के लिए संघर्ष का अंतर्सम्बन्ध नहीं बनता।

कुछ नारीवादी पितृसत्ता की जड़ें परिवार में ढूंढ रही हैं। समस्या को इस रूप में देखने से वे इस तथ्य को नजरअंदाज कर देती हैं कि परिवार खुद कुछ आर्थिक और सामाजिक प्रक्रियाओं पर आधारित है – वह समाज के आर्थिक ढांचे पर आधारित

है। ढांचे के बदलने के साथ वह भी बदलता है। परिवार का व्यापक आर्थिक–राजनीतिक ढांचे से रिश्ते को आवश्यक महत्व नहीं देने से वे भी अपने संघर्ष को ऊपरी ढांचे के क्षेत्र तक सीमित कर रही हैं।

फिर कुछ नारीवादियों में पितृसत्ता विरोधी संघर्ष को साम्राज्यवाद–सामंतवाद–दलाल नौकरशाह पूंजीवाद विरोधी संघर्ष के समानान्तर चलाने या दोनों को समान महत्व देने का विचार है। यह विचार महिलाओं के पुरूष विरोधी गोलबंदी को सामने लाकर क्रान्ति के सबसे महत्वपूर्ण सवाल वास्तविक दुश्मनों के खिलाफ सभी वास्तविक दोस्तों को गोलबंद करने के सवाल को कम महत्व देता है और वर्गीय ध्रुवीकरण में दरार डालता है। इस तरह यह वर्ग दृष्टिकोण से महिला सवाल को न देखकर महिला दृष्टिकोण से वर्ग संघर्ष को देखता है। नतीजतन पितृसत्ता की बुनियाद – इस व्यवस्था को उखाड़ फेंकने के लिये लोकयुद्ध की राह पर महिलाओं की गोलबंदी का केन्द्रीय काम महत्व नहीं पाता और पितृसत्ता विरोधी संघर्ष नव जनवादी क्रान्ति का एक हिस्सा न बनकर उससे अलग हो जाता है। इस तरह सचमुच में पितृसत्तात्मक शोषण–उत्पीड़न का खात्मा करने हेतु नव जनवादी क्रान्ति को सफल बनाने और फिर समाजवाद व साम्यवाद की दिशा में आगे बढ़ते जाने का लक्ष्य ओझल हो जाता है। वास्तविक महिला मुक्ति के लक्ष्य से महिला आन्दोलन भटक जाता है। इस संदर्भ में कामरेड लेनिन का यह उद्धरण गौर करने लायक है - ''स्त्री–पुरूष की सच्ची समानता केवल समूचे समाज के समाजवादी रूपान्तर की प्रक्रिया के दौरान ही प्राप्त की जा सकती है।''

पितृसत्ता मात्र एक ऊपरी ढांचे की परिघटना नहीं है, जिसका खात्मा आर्थिक आधार, यानी कि वे शोषणकारी वर्ग संबंध, जो किसी भी उत्पादन प्रणाली का आधार होते हैं – के खात्मे से हो सकता है। पितृसत्तात्मक संबंध आर्थिक संबंध भी हैं। पितृसत्ता के संबंध का अर्थ है, महिलाओं का न केवल राजनीतिक और सांस्कृतिक रूप से बल्कि आर्थिक और सामाजिक रूप से भी पुरुषों और शोषणकारी वर्गों के अधीन होने के संबंध।

सर्वप्रथम पितृसत्ता महिलाओं को उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व के अधिकार से वंचित रखकर उनके शोषण का भौतिक आधार प्रदान करती है। पितृसत्ता उत्पादन के साधनों से महिलाओं के बुनियादी संबंधों को निर्धारित करती है। उत्पादन के मुख्य साधनों पर स्वामित्व और नियंत्रण पर अधिकार की रोक ने, पश्चिम में दासप्रथा समाज के समय से और भारत में शूद्र रखने की व्यवस्था के समय से अर्थात् वर्गों के उदय के काल से ही, समाज में महिलाओं के स्थान को निर्धारित किया है।

जहां सामंतवाद में महिलाओं को संपत्ति का अधिकार खुले रूप से रोका जाता है, जैसे कि प्रतिक्रियावादी मनुस्मृति और सामन्तीकाल के अन्य साहित्य में लिखा हुआ है, पूंजीवाद इसे ज्यादा शांति से और ज्यादा कुशल तरीकों से करता है। अर्थव्यवस्था का यह एक कठोर सच है कि आज तक महिलाएं दुनिया की सारी संपत्ति के एक प्रतिशत से भी कम की मालिक है। और दूसरी तरफ, सारे काम का दो तिहाई वे ही करती हैं।

दूसरा, पितृसत्ता ने लैंगिक आधार पर श्रम का विभाजन निर्धारित किया। घरेलू क्षेत्र और सार्वजनिक क्षेत्र के बीच में विभाजन, जिसमें महिलाएं घरेलू काम के लिए लगा दी जाती हैं और पुरुष सामाजिक उत्पादन में रहते हैं, और फिर खुद सामाजिक उत्पादन में 'महिलाओं' के काम और 'पुरुषों' के काम में विभाजन (जिसे प्राकृतिक दिखाया जाता है) इसी के लक्षण हैं। इस प्रकार अर्थव्यवस्था के दोनों महत्वपूर्ण पहलू– उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण और श्रम विभाजन में महिलाओं की भूमिका और स्थान पितृसत्ता से निर्धारित होते हैं। आर्थिक कामकाज में स्पष्ट विभाजन उस संबंध को भी रेखांकित करता है, जो लैंगिक आधार पर घरेलू और सार्वजनिक क्षेत्रों में महिलाओं का मर्दों के साथ होता है। 'महिलाओं के पिछड़ेपन' और 'पुरुषों की काबिलियत' के सवाल के नीचे खड़ा हुआ आर्थिक तथ्य भी घरेलू काम के प्रति लिंगों के रिश्ते से जुड़ा हुआ है। घरेलू श्रम अर्थव्यवस्था का एक पहलू है और एक ऐसा पहलू है जो काफी महत्वपूर्ण हद तक समाज में महिलाओं के स्वरूप को निध ीरित करता है।

अगर निचोड़ निकाला जाए, तो उत्पादन के साधनों पर महिलाओं का सचमुच का स्वामित्व या नियंत्रण; मर्दों के साथ बराबरी के स्तर पर सामाजिक उत्पादन में भागीदारी और लैंगिक आधार पर श्रम विभाजन का खात्मा; घर की चाकरी (Drudgery) से महिलाओं को मुक्त करना और घरेलू काम को सार्वजनिक क्षेत्र में तब्दील करना, जहां बराबरी के आधार पर पुरुष घरेलू काम में भाग लेते हैं – आधार में केवल ये बदलाव पितृसत्ता से महिलाओं की सच्ची मुक्ति ला सकते हैं। क्योंकि ऊपर दिये हुए तीन पहलू पितृसत्ता के भौतिक आधार के हिस्से हैं। आधार में ये बदलाव लाये बिना, यह स्पष्ट है कि, चाहे हम कितनी ही महिलाओं को सार्वजनिक पदों और विधायक संस्थाओं में ले आयें; हम सांस्कृतिक क्षेत्र में पुराने विचारों, रिवाजों, परम्पराओं इत्यादि से चाहे कितना ही तेज संघर्ष करें; और न्यायिक रूप में महिलाओं की कोई भी स्थिति हो, पितृसत्तात्मक उत्पीड़न में कोई बुनियादी बदलाव नहीं होगा।

इसलिए उस महत्वपूर्ण पहलू (यानी कि पितृसत्ता के आधार का तत्व भी होना) को पहचानना, महिला सवाल पर हमारे रूख और क्रांति के वर्तमान स्तर और क्रांति की विजय के बाद दोनों में हमारे संघर्ष की कार्यनीतियों में बड़ा अंतर लायेगा।

इसके अलावा विचारधारा के रूप में और सामाजिक संबंध के रूप में, पितृसत्ता ऊपरी ढांचे के क्षेत्र में भी काम करती है। परिवार के अंदर रिश्ते; धर्म, शिक्षा, कानून, रिवाज़, मीडिया इत्यादि के द्वारा विकसित वैचारिक ढांचा पितृसत्तात्मक श्रम विभाजन को और शक्ति प्रदान करते हैं। इसलिए हमें इस तथ्य को कभी भी नजरअंदाज नहीं करना चाहिये कि पितृसत्ता ऐसी परिघटना है जो महिलाओं का आर्थिक रूप से शोषण करती है और वैचारिक रूप से उनका उत्पीड़न करती है। इसलिए पितृसत्ता से दोनों आधार और ऊपरी ढांचे पर लड़ना होगा। पर साथ ही यह याद रखना होगा कि महिलाओं का पुरूषसत्ता व पुरूषों के खिलाफ संघर्ष जहाँ दोस्ताना है और वर्ग-एकजूटता को हासिल करने एवं वर्ग संघर्ष को तेज करने के लक्ष्य की ओर संचालित है, वहीं महिलाओं का वर्गीय शोषण व उत्पीड़न के खिलाफ शोषक-शासक वर्गों के खिलाफ संघर्ष का चरित्र दुश्मनागत है। अत: अपने अधिकारों के लिए व्यापक महिला आन्दोलन खड़ा करते समय पितृसत्ता विरोधी संघर्ष को अवश्य ही साम्राज्यवाद-सामंतवाद विरोधी लोकयुद्ध के लक्ष्य को दिमाग में रखते हुए चलाना होगा। यहाँ माओ के इस उद्धरण को मार्गदर्शक उसूल के रूप में अपनाना होगा। **''चीन के पुरूषों पर प्राय: सत्ता की तीन तरह की व्यवस्थाओं [राजनीतिक सत्ता, बिरादरी की सत्ता और धार्मिक सत्ता] का भार रहता है। ...जहाँ तक स्त्रियों का सवाल है वे ऊपर कही हुई तीन तरह की सत्ताओं का प्रभुत्व सहने के अलावा पुरूषों का प्रभुत्व (पति की सत्ता) भी सहती हैं। ये चार प्रकार की सत्तायें-राजीनितक सत्ता, बिरादरी की सत्ता, धार्मिक सत्ता और पति की सत्ता - सामंतवाद और पितृसत्तात्मक समाज की समूची विचारधाराओं और व्यवस्थाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं । ... जमींदारों की राजनीतिक सत्ता अन्य सभी सत्ताओं की आधारशिला है। चूँकि जमींदारों की राजनीतिक सत्ता का तख्ता उलट दिया गया है, इसलिए बिरादरी की सत्ता धार्मिक सत्ता और पति की सत्ता ये सभी लड़खड़ाने लगी हैं।''**

भाग – दो

अर्थव्यवस्था

उत्पीड़न और मुक्ति के आर्थिक पहलू

1. घरेलू काम

घरेलू काम को आज ठोस रूप से समझने के लिए आइए उसके चरित्र के विकास और बदलाव को देखें।

शुरुआत में, जब इंसान झुंड में रहते थे, घर का कार्य जैसी कोई अलग-सी चीज नहीं थी। शुरुआत में पुरुष और महिलाएं मिलकर शिकार करना, मछली पकड़ना और खाना इकट्ठा करना जैसे व्यवसाय करते थे। हालांकि महिलाएं अक्सर शिकार पर जाती थीं। वे बच्चों को पैदा करने और पालने की जरूरत के कारण काफी लम्बे समय तक घर पर भी रहती थीं। इस समय में वे आसपास के इलाकों से खाना इकट्ठा करने में खुद को व्यस्त करती थीं और बाद में जानवरों को पालतू बनाने की दक्षता को सीखने के बाद उन्होंने कृषि और मवेशी पालन की खोज की। वर्ग पूर्व समाज में लिंगों के बीच में यह पहला प्राकृतिक श्रम विभाजन था।

समाज महिलाओं को बहुत इज्ज़त देता था, क्योंकि इंसान का पुनरुत्पादन सामाजिक विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण और आवश्यक समझा जाता था। महिलाओं द्वारा कृषि और मवेशी पालन की खोज ने घुमन्तू जीवन का अंत करके स्थाई वास की शुरुआत करके धीरे-धीरे जीवन पद्धति में एक बदलाव ला दिया था। समय के साथ-साथ समाज के खाने की जरूरत पूरा करने में खाने के उत्पादन और मवेशियों का योगदान शिकार से ज्यादा होने लगा। इसलिए आदिम समाज में घर में महिलाओं द्वारा काम सामाजिक उत्पादन का एक अनिवार्य और ज्यादा महत्वपूर्ण हिस्सा था। वर्ग समाज में किए जाने वाले घरेलू काम के भार से इसकी कोई समानता नहीं है। इस तरह भारी हल की शुरुआत तक और जब तक वर्ग समाज था तथाकथित सभ्यता की भोर के साथ कृषि और मवेशी पालन पुरुषों का क्षेत्र नहीं बनता है। महिलाओं के काम का काफी सामाजिक मूल्य था और कुल सामाजिक संपत्ति का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा था। वर्ग-विभाजित समाज के उद्‌भव के साथ-साथ ही जब महिलाएं पितृसत्ता के अधीन हो गईं, इस घरेलू काम को निम्नकोटि का ठहराया जाने लगा और इसके सामाजिक महत्व को खत्म कर डाला गया।

पूंजीवाद के फैलाव और घुसपैठ से, जिससे औद्योगिक और सेवा क्षेत्र और अर्द्धसामन्ती कृषि विकसित हुई है, महिलाओं का श्रम सामाजिक उत्पादन में आ गया है। महिला केवल घर में काम नहीं करती है, बल्कि सामाजिक श्रम में शामिल एक मजदूर श्रमिक या कर्मचारी भी बनती है। जहां पूंजीपति और जमींदार उसे सामाजिक उत्पादन के क्षेत्र में खींचते हैं, वहीं न तो ये वर्ग और न ही उनकी राजसत्ता उसे उसके घरेलू भार से मुक्त करते हैं। असल में महिला दोहरी गुलाम है। घर के बाहर वह पैसा लेकर गुलाम है और घर के अन्दर मुफ्त में गुलाम है। सामाजिक उत्पादन में उसकी भागीदारी वरदान के रूप में नहीं बल्कि अतिरिक्त भार के रूप में दिखती है। घरेलू काम और सामाजिक उत्पादन, महिलाओं पर दोहरा भार है। लेनिन ने घरेलू काम और पूंजीवादी समाज में महिलाओं पर इसके असर को इस रूप में दर्शाया था, **"महिलाओं को मुक्त करने के सारे कानूनों के बावजूद वह एक घरेलू गुलाम बनी हुई है, क्योंकि घर का छोटा-छोटा काम उसे तोड़ता है, दबाता है, मूर्ख बनाता है और बेइज्जत करता है, उसे रसोई और नर्सरी से बांधता है और वह अपने श्रम को . . . . छोटे-छोटे, दिमाग खराब करने वाले, बेतुकी और दबाने वाली घरेलू चाकरी पर बर्बाद करती है।"** *(एक महान शुरुआत)*

कम्युनिस्ट पार्टी को महिलाओं की इस दोहरी गुलामी के सवाल को मजबूती से उठाना चाहिए। उसे महिलाओं के घरेलू काम के बोझ को कम करने और सामाजिक उत्पादन व अन्यान्य सामाजिक-राजनीतिक कार्यों में बढ़-चढ़कर हिस्सेदारी करने का मौका देने और महिला मजदूरों की सुविधाओं के लिए संघर्ष करना चाहिए। क्रान्ति के बाद निजी घरेलू काम के हिस्से को सामाजिक सेवा क्षेत्र में पुनर्गठित करना होगा - जैसे बच्चों के लिए क्रेश (शिशु-गृह), स्कूलों और कारखानों में खाना, सामूहिक लौण्ड्रियां, मवेशी खाने आदि जैसी व्यवस्था खड़ी करनी होगी।

एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू, जिसे सर्वहारा को उठाना चाहिए, उस पितृसत्तात्मक विचार से लड़ना है, कि घरेलू काम केवल महिलाओं को करना चाहिए। महिलाओं के अंदर इसके बारे में चेतना पैदा करने के साथ-साथ, इस संदर्भ में पुरुष पूर्वाग्रहों के बारे में पहले अपने कैडरों को शिक्षित करना पार्टी के लिए आवश्यक है। इसके बाद उसे महिलाओं के साथ घरेलू काम बांटने के लिए पुरुषों को व्यवस्थित रूप से गोलबंद करना होगा। परन्तु यह एक लम्बी प्रक्रिया है। इसमें मनाने के संघर्षों के साथ-साथ शिक्षा अभियान और एकजुटता अभियान शामिल होना चाहिए। हालांकि यह एक दीर्घकालीन कार्यभार है और व्यापक स्तर पर इसे लागू करने का वस्तुगत

आधार केवल समाजवाद के आगे बढ़ने के साथ-साथ ही आ सकता है, फिर भी घरेलू काम में पितृसत्तात्मक मूल्यों के खिलाफ अभियान को किसी भविष्य की तारीख तक स्थगित करने का बहाना नहीं बनाना चाहिए। हालांकि छोटे स्तर पर, ये हमारी पार्टी, फौज व जन संगठन और जनता के बीच अभी ही शुरू किया जा सकता है, खासतौर पर हमारे गुरिल्ला जोनों और भविष्य के आधार इलाकों में।

2. सामाजिक उत्पादन

पितृसत्ता और सामाजिक उत्पादन से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण पहलू हम पहले ही देख चुके हैं। घरेलू क्षेत्र तक महिलाओं को सीमित रखना उनकी सोच को बौना कर देता है और उनकी चेतना को संकीर्ण कर देता है, इसके विपरीत सामाजिक उत्पादन में महिलाओं की भागीदारी उनकी सामाजिक चेतना को खोलती है और उनकी वर्ग सोच को विकसित करती है। यह उनको उनकी गुलामी की वर्गीय जड़ों को समझने में मदद करती है। इससे राजनीतिक संघर्ष में उनकी भागीदारी प्रेरित होती है। और यह उनको यह समझने में मदद करती है कि उनकी घरेलू गुलामी का सचमुच कौन फायदा उठाता है। फ्रेडरिक एंगेल्स ने कहा था – ''. . . **महिला को मुक्त करना और उसको पुरुष के बराबर बनाना तब तक असंभव है और रहेगा जब तक उसे सामाजिक उत्पादक श्रम से बाहर रखा जाता है। महिला की मुक्ति तभी संभव होगी जब महिलाएं बड़े, सामाजिक स्तर पर उत्पादन में भाग ले सकती हैं और घरेलू काम उसके समय का नगण्य हिस्से से ज्यादा नहीं लेता है''** *(परिवार , निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ति)*।

हमें इस पर जोर देना चाहिये कि महिलाओं को सामाजिक उत्पादन में भाग लेना चाहिए। इस संदर्भ में हमें सामन्ती पर्दा प्रथा से लड़ना चाहिए, जो महिलाओं को घरेलू क्षेत्र तक सीमित करती है। पर ऐसा करने में हमें सामाजिक उत्पादन में श्रम के लैंगिक विभाजन और इस प्रकार के अन्य पितृसत्तात्मक व्यवहारों को भी पहचानना चाहिए और उनके खिलाफ लड़ना चाहिए।

आज के समाज में, हालांकि महिलाएं काफी बड़ी संख्या में सामाजिक उत्पादन में हिस्सा लेने के लिये बाहर आयी हैं, पर वे उन सारे कामों को अभी तक कर रही हैं जो उनकी 'महिला प्रकृति' के लायक हैं। यह पितृसत्ता के मूल्यों को थोपकर महिला को समर्पित और आज्ञाकारी बनाए रखने के प्रयास के अलावा कुछ नहीं है। साथ में हमें यह भी याद रखना चाहिए, जो एंगेल्स ने काफी स्पष्ट शब्दों में कहा है: **"सार्वजनिक उपयोग में समूचे महिला समुदाय का घुसना महिला मुक्ति की पहली बुनियाद है।"** *(वही, जोर हमारा)*

कृषि और उद्योग या सेवा क्षेत्र–सभी जगह लैंगिक भेदभाव के आधार पर श्रम–विभाजन कृत्रिम रूप से करते हुए महिलाओं को ''महिला प्रकृति'' के मुताबिक काम में लगाया जाता है। उन कार्यों को दोयम दर्जे का और निम्न कोटि का करार देकर महिलाओं की श्रम–दक्षता की जबरदस्त लूट–खसोट होती है। जबकि वास्तविकता यह है कि महिलाएं वे सारे कार्य कर सकती हैं जिनके बारे में पुरूषों को ही समर्थ बताया जाता है। यह तो विश्व युद्धों के दौरान साम्राज्यवादी देशों तथा समाजवादी रूस में साबित हुआ तथा क्रान्ति के बाद चीन में भी। इस तरह पुरूष और महिलाओं के काम में फर्क चाहे किसी भी कसौटी पर आधारित हो – 'शारीरिक ताकत', जैसे सामन्तवाद कहता है या 'दक्षता' जैसे पूंजीवाद कहता है– पितृसत्तात्मक पूर्वाग्रह के अलावा कुछ नहीं है।

ये पूर्वाग्रह ट्रेड यूनियन आन्दोलन से लेकर किसान व अन्य आन्दोलनों में भी महिलाओं के प्रति नजरिए में स्पष्ट दिखते हैं।

सामाजिक उत्पादन में पितृसत्ता का एक अन्य पहलू है, महिलाओं द्वारा अपनी कमाई को घर के मुखिया को सौंप देना। इसलिए महिलाएं एक दोहरे अलगाव का अनुभव करती हैं। पहला, खेतिहर मजदूरों और औद्योगिक श्रमिकों के रूप में जमींदार या पूंजीपति द्वारा उनसे उत्पाद अलग कर दिया जाता है। उसके बाद घर का मुखिया पुरुष उससे उसकी कमाई को अलग कर देता है।

ये व्यवहार उसी समय पर उस सामाजिक चेतना को भी नष्ट कर देता है, जो सामाजिक उत्पादन में भाग लेने के कारण महिलाओं में विकसित होती है। कमाई से वंचना दो अलग–अलग तरीकों से होती है। एक है – बेशर्मी से जबरदस्ती उसे समर्पण कराना। दूसरा तरीका ज्यादा अप्रत्यक्ष है। कमाई करने वाला पुरुष घरेलू स्थिति को इस तरीके से संचालित करता है, जिससे महिला की आय घरेलू जरूरतों पर खर्च होती है और पुरुष अपने पैसे को अपने शौक पर, सम्पत्ति एकत्र करने पर खर्च करने का विशेषाधिकार रखता है। संक्षिप्त में पुरुष की कमाई उसकी अपनी है और महिला की कमाई पूरे परिवार की है।

सामाजिक उत्पादन से संबंधित एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि महिलाओं को केवल मेहनत करनी पड़ी, परन्तु सम्पत्ति पर मालिकाने का अधिकार उनको नहीं दिया गया। सामन्तवाद में उत्पादन के सारे साधनों पर स्वामित्व सामन्ती वर्गों के पुरुषों का था। सामन्ती वर्गों की महिलाओं ने किसानों के मेहनत के फलों को तो अपने वर्ग के पुरुषों के साथ खाया, पर आमतौर पर उन्हें सम्पत्ति पर अधिकार की इज़ाज़त नहीं दी गई। सम्पत्ति का जब्तीकरण, जो निजी सम्पत्ति के उदय के साथ

शुरू हुआ, सामन्तीकाल तक वर्ग समाज के नियम के रूप में चलता रहा। हालांकि पूंजीवाद कानूनी रूप से महिलाओं को सम्पत्ति के मालिकाना अधिकार से वंचित नहीं करता है, पर व्यवहार में सच यह है कि सम्पत्ति पर अधिकार पुरुषों का होता है और उसकी लेन-देन पुरुषों द्वारा होती है। सामाजिक सम्पत्ति के सारे रूपों से यह बेदखली है, जो कि महिला को अपनी मजदूरी से वंचित करने के काम को भी सशक्त करती है। इस तरह पूंजीवादी जनवाद, जो कि सम्पत्ति पर महिलाओं के बराबर अधिकार को सुनिश्चित करने की बात करता है, केवल एक ढकोसला है।

क्रांतिकारी महिला आन्दोलन को इस मुद्दे को उठाना चाहिए की महिलाएं अपनी कमाई का मालिक स्वयं हो और सम्पत्ति पर उनकी बराबर की हिस्सेदारी हो। इन मुद्दों पर आधारित संघर्ष को महिलाओं को नव जनवादी क्रांति में हथियार लेकर उतरने हेतु प्रोत्साहित करने की दिशा में संचालित होना चाहिए।

3. परिवार और विवाह

अन्य सामाजिक संस्थाओं की तरह सामाजिक ढांचे के व्यापक बदलाव के साथ-साथ परिवार में भी बदलाव आया है। जैसे कि एंगेल्स ने पहले ही स्पष्ट किया है कि निजी सम्पत्ति के विकास के साथ-साथ एकनिष्ठ परिवार अस्तित्व में आया। एकनिष्ठ परिवार के दो पहलू हैं जिन पर ध्यान दिया जाना चाहिए – एक तरफ है अर्थव्यवस्था में उसकी भूमिका और दूसरी तरफ है पितृसत्ता को संस्थागत करने में उसकी भूमिका।

शिकार एकत्रित करने वाले युग के विकसित चरणों के समय से एकनिष्ठ परिवार उत्पादन और उपभोग की इकाई के रूप में कार्य करता था। उत्पादन पारिवारिक इकाइयों के आधार पर संगठित किया जाता था। सामन्ती सम्पत्ति का स्वामित्व और अतिरिक्त की उगाही दोनों परिवार पर आधारित थे। उत्पादन के साधनों के विकास का स्तर उत्पादन की व्यक्तिगत प्रकृति को तय करता था। इससे सामन्तवाद के अन्दर परिवार उत्पादन की इकाई बन गया। चाहे जमींदारों का परिवार हो या किसानों के परिवार, सारा उपभोग एक इकाई के रूप में परिवार करता था।

परन्तु पूंजीवाद के विकास के साथ और मशीनों द्वारा उत्पादन के भूतपूर्व साधनों के प्रतिस्थापन और इस प्रकार व्यापक उत्पादन की शुरुआत के साथ, श्रम का सामाजिकीरण हुआ। सैकड़ों श्रमिक एक स्थान पर केन्द्रित हुए, उत्पादन अब पारिवारिक आधार पर संगठित नहीं होता था। पूंजीवाद ने भूतपूर्व परिवार आधारित उत्पादन व्यवस्था को तोड़ और बिखेर दिया। लेकिन अधिकतर उपभोग एक इकाई के तौर पर कार्य कर रहे परिवार द्वारा ही होता था।

परन्तु क्या पूंजीवाद की नई उत्पादन प्रणाली ने पूरी तरह से परिवार की आर्थिक भूमिका को खत्म कर दिया? ऐसा कहना गलत होगा। जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं घरेलू श्रम पूंजीवाद में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है, यह अर्थव्यवस्था का दूसरा स्तम्भ है – पहला है सार्वजनिक स्तम्भ जिसमें काफी ज्यादा श्रम कार्य होता है। घरेलू श्रम पारिवारिक दायरे में काम करता है। ये श्रम शक्ति की आपूर्ति और पुनरुत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। पूंजीवादी व्यवस्था अपने पुनरुत्पादन के लिए भी घरेलू श्रम पर निर्भर होती है। इस तरह परिवार की आर्थिक भूमिका बरकरार रह गई है और यह पूंजीवाद के आधार में अपनी भूमिका अदा करता रहेगा।

एंगेल्स ने एकनिष्ठ परिवार के बारे में कहा है, **"एकनिष्ठता पुरुष और महिला के समझौते के रूप में इतिहास में अपना चेहरा नहीं दिखाती है, और ऐसे समझौते के उच्चतम स्तर के रूप में तो कतई नहीं। इसके विपरीत, यह एक लिंग द्वारा दूसरे लिंग की अधीनस्थता के रूप में आती है, पूर्व ऐतिहासिक समयों में कभी नहीं देखे गए, लिंगों के बीच में संघर्ष के दावे के रूप में आती है।"**

वर्ग समाज में एकनिष्ठ परिवार पितृसत्ता का स्तम्भ रहा है। सामन्ती समाज में एकनिष्ठ परिवार का ढांचा सामन्ती स्टेट के ढांचे के जैसा होता है। एक पितृसत्तात्मक केन्द्र होता है जो पूरे परिवार पर अध्यक्षता करता है, महिला और बच्चे उसकी प्रजा हैं, उन्हें उसकी सेवा करनी होती है और उसकी जरूरतों को पूरा करना होता है। जो कुछ भी पत्नी और बच्चे कमाते हैं सारी कमाई उसे सौंप दी जानी चाहिए। वह घरेलू काम में कोई हिस्सा नहीं लेता। सबसे पहले उसकी जरूरतें पूरी की जानी चाहिए। परिवार के अन्दर उसके शब्द कानून हैं और वह केवल फैसले ही नहीं सुनाता बल्कि सजा भी देता है। अपनी 'प्रजा' को अनुशासन में रखने के लिए वह हिंसा का इस्तेमाल भी करता है। वह अपने राज्य-परिवार का भगवान और मालिक है।

सामन्ती समाज के सामाजिक पदानुक्रम की सीढ़ी के जैसे-जैसे हम नीचे उतरते हैं, सामन्ती समाज की पितृसत्तात्मक कठोरता कम होती जाती है। परन्तु सम्पत्तिविहीन उत्पीड़ित वर्गों और जातियों में भी ये पितृसत्तात्मक रिश्ते आमतौर पर दिखते हैं।

पूंजीवाद में कुछ उदार प्रभाव घुस गए होंगे, परन्तु पुरुष और महिला के बीच में श्रम विभाजन बरकरार रहता है, बल्कि पूंजीवादी समझौते के रूप में सशक्त होता है और उसके साथ परिवार के अन्दर पितृसत्तात्मक रिश्ते के आवश्यक पहलू कायम रहते हैं।

भारतीय समाज में विवाह आमतौर पर पितृसत्तात्मक होता है, लड़की के रूप में वह अपने पिता पर निर्भर होती है, विवाह के बाद वह अपने पति की छाया में रहती है और अपने पति की मौत के बाद अपने बेटों पर निर्भर होती है। सारी जिन्दगी महिला एक लता बनकर रहती है जिसे पितृसत्तात्मक सहारे की जरूरत होती है।

विवाह बुनियादी रूप से तयशुदा होते हैं। विवाह तय करने में जोड़े के चयन पर और उससे भी ज्यादा दुल्हन की स्वीकृति पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। भारत में उपभोक्तावाद के फैलाव के साथ–साथ विवाह दुल्हन के परिवार से पैसे निकालने का एक माध्यम बन गया है। यह दहेज, सम्पत्ति और माल/वस्तुओं को प्राप्त करने का तरीका बन गया है और दुल्हन का इनसान के रूप में कोई महत्व नहीं रह गया है। इसलिए दहेज के लिए महिलाओं के उत्पीड़न के साथ–साथ उनकी धड़ल्ले से हत्याएं भी की जा रही हैं। इस अमानवीय कुप्रथा का शिकार शोषित वर्ग के परिवार भी हो रहे हैं।

गहरे तक पैठे पितृसत्तात्मक रूझानों की वजह से परिवार में लड़कियों के प्रति घोर भेदभाव अपनाया जा रहा है। महिलाओं को और उनके श्रम को बहुत कम महत्व देने और दहेज की कुरीतियों की वजह से बच्चियां पैदा होने से पहले ही बड़े पैमाने पर मार दी जा रही हैं, यानी भ्रूण हत्याएं हो रही हैं। इस अमानवीय कार्य के लिए आधुनिक तकनीक का उपयोग किया जा रहा है। इसके वजह से देश के कई राज्यों में महिला–पुरूष के अनुपात में भारी कमी आई है। महिलाओं के प्रति भेदभाव कितना गहरा है उसका यह एक संकेत है।

आज का विवाह और परिवार – दोनों महिलाओं के लिए बेहद उत्पीड़नकारी हैं। इसके अलावा परिवार वह संस्था है जिसके द्वारा शासक वर्ग पुरुषों के बीच में अपनी पितृसत्तात्मक विचारधारा के लिए समर्थन हासिल करते हैं। वर्ग उत्पीड़न वाले समाज में, जाति उत्पीड़न से भरे समाज में पितृसत्तात्मक एकनिष्ठ विवाह उत्पीड़ित वर्गों के पुरुषों को जो विशेषाधिकार देता है, वहीं शासक वर्गों के लिए पितृसत्ता की संस्था को जिन्दा और बरकरार रखता है। आज के उत्पीड़नकारी परिवार के ढांचे के बिना, ऐसे परिवारों को बांधनेवाली शादियों के ढकोसलों के बिना, शासक वर्गों के पितृसत्तात्मक विचारों को सामाजिक मान्यता नहीं मिल सकती थी। एक लड़की होने के नाते वह परिवार में दबना सीख जाती है और परिवार में ही लड़का होने के नाते वह ऐसा दबाव डालना सीख जाता है। इसलिए जनता के लिए असली जनवाद जीतने के किसी भी प्रयास को क्रांतिकारी युद्ध में महिलाओं की भारी संख्या समेत व्यापक जनता को गोलबन्द करने के साथ–साथ परिवार के अन्दर पितृसत्तात्मक रिश्तों की जड़ों पर चोट करनी होगी।

हमें ऐसा नहीं समझना चाहिए कि महिलाओं का पितृसत्तात्मक एकनिष्ठ परिवार के मालिक के खिलाफ संघर्ष उनके साम्राज्यवाद सामन्तवाद विरोधी संघर्ष की पूर्वशर्त है। हम इस तरह नारी के बराबरी के अधिकार को और जनवाद को महज घर-परिवार के दायरे तक ही सीमित नहीं कर सकते। दरअसल परिवार का जनवादीकरण समाज के जनवादीकरण के लिए संघर्ष में भाग लेने के जरिए ही हो सकता है, उससे अलग-थलग रहकर नहीं। साथ ही याद रखना होगा कि घर-परिवार में पुरूषसत्ता विरोधी संघर्ष का चरित्र दोस्ताना है। इसे मुख्यत: समझाने-बुझाने एवं बहस-मुबाहिसों के जरिए किया जाना चाहिए ताकि वर्गीय एकता बढ़े, उसमें पितृसत्ता विरोधी संघर्ष के जरिए दरार न पड़ जाए। दूसरी तरफ, साम्राज्यवाद-सामंतवाद के खिलाफ संघर्ष का चरित्र दुश्मनीमूलक है और इसका हल क्रांतिकारी युद्ध के जरिए किया जाना है। अत: घर-परिवार में मुख्यत: समझाने-बुझाने का तरीका लेना, महिलाओं को क्रांतिकारी युद्ध में उतारने के महत्व और जरूरत का, तथा इसके लिए महिलाओं के जनवाद के महत्व और जरूरत का अहसास घर-परिवार के पुरूष व महिला साथियों को कराना और इसके लिए संघर्ष करना बेहद जरूरी है। तभी हम पुरूष-महिला कंधे से कंध े मिलकार संघर्ष में भाग लें - यह स्थिति ला पायेंगे। यह स्थिति घर-परिवार के रिश्तों में जनवादीकरण का मार्ग भी प्रशस्त करेगी। मतलब यह कि घर-परिवार के अन्दर पितृसत्ता के साथ महिलाओं के अन्तरविरोध और समाज में शोषक-शासक वर्गों के साथ महिलाओं के अन्तरविरोध- इन दोनों अन्तरविरोधों में स्पष्ट फर्क किया जाना चाहिए। दोस्तीमूलक अन्तरविरोधों का हल मुख्यत: समझाने-बुझाने के तरीके से किया जाना चाहिए ताकि दुश्मनीमूलक अन्तरविरोधों का हल क्रांतिकारी युद्ध के जरिये करने हेतु समूची शक्तियों को गोलबंद किया जा सके और उनकी समूची पहलकदमी को वर्ग-दुश्मनों के खिलाफ संगठित रूप से लगा दिया जा सके।

केवल जब परिवार अपनी आर्थिक भूमिका अदा करना बन्द कर देता है और आधार की संस्था होने की जगह मात्र ऊपरी ढांचे की संस्था बन जाता है, तभी उसमें कोई बदलाव दिख सकता है। केवल यही स्थिति परिवार के अन्दर पितृसत्ता का खात्मा कर सकती है और उसका जनवादीकरण कर सकती है।

क्रान्ति के बाद कम्युनिस्ट पार्टी को नीति के तौर पर महिलाओं से घरेलू काम का भार हटाना चाहिए और यह काम केवल पुरुषों को यह भार बांटने का आह्वान करने से नहीं होगा बल्कि उस किस्म के तरीकों को निकालने से होगा जो इस काम को अर्थव्यवस्था में घरेलू दायरे से निकालकर सार्वजनिक क्षेत्र में ले आयें। महिलाओं को पूरी तरह घरेलू भार से मुक्त होना चाहिए जो कि परिवार की सीमा के अन्दर

संचालित होता है तभी सामाजिक उत्पादन में उनकी भागीदारी अर्थपूर्ण हो सकती है और पुरुषों के साथ सामाजिक समानता प्राप्त करने के लिए उन्हें प्रोत्साहित कर सकती है।

इस प्रकार हम विवाह की संस्था के खिलाफ नहीं हैं पर एकनिष्ठ परिवार के पितृसत्तात्मक ढांचे के खिलाफ हैं। हमें इस बात के लिए लड़ना चाहिए कि तयशुदा शादियों के स्थान पर स्वतन्त्र चयन से शादियां हों। हमारे देश में इसका अर्थ यह भी होना चाहिए कि जाति, धर्म, नस्ल, राष्ट्रीयता के परे शादियों को ठोस समर्थन व प्रोत्साहन दिया जाये। और तब और भी ज्यादा जब ये शादियां दलितों के साथ हों।

शादी का सामन्ती तौर–तरीका रीति के रूप में बन्द होना चाहिए। हमारे गुरिल्ला जोनों में दहेज पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए और महिलाओं के लिए तलाक की प्रक्रिया कम जटिल बनानी चाहिए। पत्नी और बच्चों को पीटने समेत परिवार में सारे पितृसत्तात्मक विशेषाधिकारों और प्रवृत्तियों के बारे में शिक्षित करने–मनाने–संघर्ष करने का निरन्तर अभियान चलाना चाहिए। आर्थिक नीतियों (जो खुद सामाजिक क्रान्ति की सफलता पर निर्भर है), कानून और पुरुषों के दृष्टिकोण को बदलने के लिए महिलाओं के संघर्ष और शिक्षा के द्वारा चेतना विकसित करने के सम्मिश्रित पैकेज से ही उस पितृसत्तात्मक एकनिष्ठता को बदला जा सकता है जो परिवार के अन्दर महिला को बांध कर रखती है और उत्पीड़ित पुरुषों की प्रगतिशील सोच को पीछे धकेलती है। जिसे खत्म करना है, वह है – एकनिष्ठ परिवार पर शिकंजे जैसी पितृसत्तात्मक पकड़। जनवादी रिश्तों को लाने में सारी रुकावटों को नष्ट किया जाना चाहिए। पूरी समानता, प्रेम और साझापन के आधार पर परिवार बनना चाहिए। नये एकनिष्ठ परिवार को जनता के बीच में पितृसत्ता का किला होने की जगह महिला को मुक्त करना चाहिए और पुरुष को उस हद तक मर्यादित करना चाहिए। हम वर्ग–संघर्ष का दृष्टिकोण रखते हुए और वर्ग संघर्ष को आगे बढ़ाते हुए तथा इसमें व्यापक महिलाओं को शामिल करते हुए उपरोक्त कार्यों को पूरा करने की ओर बढ़ सकते हैं।

भाग – तीन

संस्कृति

I पितृसत्तात्मक संस्कृति और लिंग विभाजन का प्रभुत्व

पितृसत्तात्मक संस्कृति में भरी हुई केन्द्रीय धारा, महिलाओं के खिलाफ भेदभाव है। पितृसत्ता की संस्कृति की ताकत, पितृसत्ता की आर्थिक भूमिका से आती है और बदले में अर्थव्यवस्था और संस्कृति में पितृसत्तात्मक रिश्तों को सशक्त करती है। अर्थव्यवस्था और संस्कृति में पितृसत्ता का अस्तित्व, जमींदारों और पूंजीपतियों द्वारा वर्ग शोषण में मदद पहुंचाता है। साथ ही यह वर्गीय शोषण व उत्पीड़न पितृसत्तात्मक संस्कृति और उसकी व्यवस्था का पोषण करता है।

पुरुषों की व्यापक जनता में, पितृसत्ता कई रूपों में अस्तित्व में दिखती है। सबसे प्रचलित रूप हैं पुरुष श्रेष्ठतावाद और पुरुष पूर्वाग्रह। पुरुषों के प्रगतिशील तबकों के बीच भी, जो आम तौर पर महिला आन्दोलन की मांगों का समर्थन करते हैं, पितृसत्तात्मक प्रवृत्तियों और मूल्यों से उबरने के सचेतन प्रयासों का अभाव है।

नारियों के प्रति द्वेष की अभिव्यक्ति है पुरुष श्रेष्ठता। यह पुरूष श्रेष्ठता एक फासीवादी पितृसत्तात्मक मत है। श्रमिक वर्ग और गरीब किसानों के पुरुषों समेत, जनता के ज्यादातर पुरुष सदस्यों के बारे में कहा जा सकता है कि उनमें यह पुरुष पूर्वाग्रह मौजूद रहता है।

और जहां तक प्रगतिशील पुरुष साथियों का सम्बन्ध है, जिनसे सामाजिक संघर्ष में अक्सर आमना सामना होता है, उनके लेखों, भाषणों और व्यवहार में महिला सवाल पर ध्यान नहीं देना, पितृसत्ता की जिन्दगी बढ़ाने का केवल एक और तरीका है।

आम महिलाओं के बीच इस मामले में अन्तरविरोधी स्थितियां हैं। जहां कुछ स्पष्ट रूप से पितृसत्ता विरोधी है, कइयों के विचार पितृसत्ता के पक्ष में हैं। पितृसत्ता उनकी सहमति और सहापराधिता से काम करती हैं। अर्थव्यवस्था और समाज में पितृसत्ता की गहरी पैठ के कारण इन महिलाओं ने पितृसत्तात्मक मूल्यों और प्रवृत्तियों को आत्मसात कर लिया। महिलाओं द्वारा आत्मसात पितृसत्तात्मक मूल्य भी पितृसत्तात्मक संस्कृति का एक महत्वपूर्ण आयाम है और महिला मुक्ति आन्दोलन के सामने एक तात्कालिक रुकावट है। इसमें सबसे महत्वपूर्ण है पितृसत्ता का पोषण करने, उसे टिकाए रखने और उसे बढ़ावा देने में शासक वर्गों की सक्रिय भूमिका।

1. शिक्षा

भारत में महिलाओं की साक्षरता दर पुरुष साक्षरता दर से काफी कम है। दूल्हा ढूंढने और शहरी निम्न पूंजीपतियों के बीच शादी तय करने के समय, यह ध्यान रखा जाता है कि होने वाली दुल्हन का शैक्षणिक स्तर, दूल्हे से ज्यादा तो नहीं है। शिक्षा एक पुरुष विशेषाधिकार है। बेटियों को अपनी पढ़ाई जारी रखने के लिए पितृसत्ता के साथ लम्बी लड़ाई लड़नी पड़ती है।

शिक्षा के व्यापारीकरण और खर्च में बढ़ोतरी के साथ, मध्यम वर्ग के परिवार भी अक्सर बेटियों को शिक्षा से वंचित रखकर बेटों को शिक्षित करते हैं।

पाठ्यपुस्तकें पितृसत्तात्मक मूल्यों का प्रतिनिधित्व करती हैं। स्कूलों में पढ़ाई का सार पितृसत्तात्मक है।

लिंग के आधार पर परेशान करना, दोनों लिंगों के लिए जो अलग-अलग खेल सिखाए जाते हैं और सीखने के माहौल के पाठ्येतर पहलुओं में प्रचलित भेदभाव भी लड़कों और लड़कियों की अलग-अलग चेतना विकसित करने में उतने ही महत्वपूर्ण कारक हैं। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि जहां तक महिलाओं का सम्बन्ध है, शिक्षा और रोजगार, अस्थाई नियुक्ति के रूप में अक्सर उनके विवाह के माध्यम समझे जाते हैं। महिलाओं का जीवन में मुख्य व्यवसाय शादी करना – परिवार हासिल करना, पति, बूढ़ों, बीमारों की सेवा करना, बच्चे पालना इत्यादि समझा जाता है।

2. मीडिया

मास मीडिया एक जैसा उपकरण है जो बुनियादी रूप से भारतीय शासक वर्गों के पक्ष में, साम्राज्यवादियों, उनके दलाल शासक वर्गों और राजसत्ता के नियंत्रण में है।

दृश्य मीडिया और प्रिन्ट मीडिया में ग्राफिक खुले रूप से यौन भरे मजाकों से भरे होते हैं। टी.वी. धारावाहिकों की विषय वस्तु, पुरुष आधिपत्य के विचारों को प्रबल करने के लिए एक प्रभावशाली माध्यम के रूप में काम करती है। दृश्य मीडिया काफी सारे, जिन्हें कहा जा सकता है, परिवार आधारित भावुक नाटक लेकर आता है जिसमें महिलाओं को सामन्ती और पूंजीवादी रूढ़िवादी धारणा के अनुसार दर्शाया जाता है। नाच और गाने उसे काफी हद तक एक यौन वस्तु के रूप में प्रस्तुत

करते हैं। वैश्वीकरण के बाद तीसरी दुनिया में साम्राज्यवादी शोषण की और गहरी घुसपैठ और ज्यादा व्यापक फैलाव के बाद, साम्राज्यवादी मीडिया ने न केवल काले, भूरे और पीले लोगों के लिए हीरो/हिरोइनों के रूप में श्वेत पात्रों को थोपा है बल्कि सौन्दर्य की अपनी नस्लवादी धारणाओं को भी थोप दिया है। दैनिक मीडिया में यौन और अश्लील साहित्य बढ़ रहा है। विज्ञापन ऐजेंसियों ने उपभोक्तावाद फैलाया है, एक भ्रामक उच्च वर्ग जीवन पद्धति को फैलाया है और ऐसा करने में उन्होंने घटिया सामानों से भरे हुए बाजार में बेचने के लिए महिलाओं के शरीर का इस्तेमाल किया है।

कई प्रकार के सौन्दर्य प्रसाधनों, घरेलू उपकरणों और आधे तैयार या पूरी तरह तैयार खाद्य वस्तुओं का उपभोग महिला मुक्ति के रास्ते के रूप में दिखाया जाता है। पूरी दुनिया जिसके बारे में मास मीडिया चिन्तित है, वह शहरी और ग्रामीण अमीरों की है। उसने किसान महिलाओं और महिला श्रमिक वर्ग की जिन्दगी और समस्याओं को दर्शाने का शायद ही कभी प्रयास किया है। मास मीडिया द्वारा फैलाए जा रहे ये सारे पितृसत्तात्मक विकृतियों और विरूपों से लड़ना, क्रान्तिकारी आन्दोलन का कार्यभार है। महिला मुक्ति आन्दोलन को अपने द्वारा लिए गए जन संचार में क्रान्तिकारी रूप से वैकल्पिक सार को विकसित करना होगा।

3. धर्म और धार्मिक श्रेष्ठतावाद

जो भी शुरुआती धर्म पैदा हुए थे, वे शुरुआती वर्ग समाजों की स्थापना और विकास के तहत हुए थे। शोषक वर्गों के लिए धर्म एक सैद्धान्तिक हथियार है। इन सारी धार्मिक व्यवस्थाओं की शुरुआत, निजी सम्पत्ति और एकनिष्ठता के विकास की प्रक्रिया में हुई थी। इसलिए ये सारे धर्म, विभिन्न मात्राओं में प्रभावशाली पितृसत्तात्मक विचारों को प्रतिबिम्बित करते हैं। धर्म, जिसने शोषणकारी सामाजिक रिश्तों को मान्यता दी, उसने उत्पीड़क पितृसत्तात्मक रिश्तों को भी मान्यता दी। इन सारी धार्मिक व्यवस्थाओं के पवित्र ग्रन्थ, मातृत्व और महिलाओं का पुरुषों के अधीन होने को देवीकृत करते हैं। साथ ही साथ, सिख धर्म जैसे अन्य धर्म हैं, जो सामन्ती सामाजिक व्यवस्था के विरोध के समय पर उभरे थे। मुख्य धार्मिक व्यवस्थाओं के भीतर भी कई विरोधी पंथ थे जैसे प्रोटेस्टेंट धर्म, वीराशैव धर्म और भक्ति परम्परा। इनमें से कुछ पंथों की महिला सन्त थी जैसे अकम्मा और मीराबाई। हालांकि इन सुधार आन्दोलनों ने पितृसत्ता के कुछ व्यवहारों का विरोध किया था और महिलाओं के सम्बन्ध में एक प्रगतिशील भूमिका निभाई थी। परन्तु उन्होंने धर्म द्वारा स्थापित बुनियादी पितृसत्तात्मक सिद्धान्तों

पर सवाल नहीं उठाया। शुरुआती सुधारवादी उभार के बाद वे जल्दी ही पुरुष आधिपत्य विचारों के निर्लज्ज कर्त्ता बन गए। धर्मों द्वारा महिलाओं को दिए गए आदर्शवादी समाधानों के कारण और उनके द्वारा कुलपति को देवीकृत करने और पुरुष प्रभुत्व को मान्यता देने के कारण, महिलाओं के लिए धर्म के जरिए मुक्ति का रास्ता पाना असम्भव है। असल में, क्रान्तिकारी महिला आन्दोलनों का एक कार्यभार है, विभिन्न धार्मिक व्यवस्थाओं में स्थापित पितृसत्तात्मक धारणाओं से लड़ना।

धर्म का कट्टरपंथी और डरावना महिला–विरोधी चेहरा तब और भी स्पष्ट हो जाता है जब वह फासीवादी हो जाता है। ऐसे समयों में, जैसा कि भारत में हिन्दू साम्प्रदायिकता का मामला है, धार्मिक अल्पसंख्यकों, उत्पीड़ित जातियों और जनवादी ताकतों को भरपूर कोशिशों के जरिए निशाना बनाया जाता है। वे संघर्ष द्वारा प्राप्त नाममात्र के अधिकारों को भी छीनने का प्रयास करते हैं। हिन्दुत्व का पूरा प्रयास है कि भारतीय महिलाओं को सीता और सावित्री बनाया जाए। आर.एस.एस. के नेतृत्व में चल रही हिन्दूवादी ब्रिगेड ने भारतीय महिलाओं की चेतना को फिर से ढालने के लिए एक निरन्तर अभियान लिया है। उनके अनुसार, हिन्दू महिलाओं को खुद को रसोई, बच्चों और धर्म तक सीमित रखना चाहिए, पति के प्रति वफादार होना चाहिए और उसकी पूजा करनी चाहिए। 'पवित्रता', 'सुरक्षा' और 'नैतिकता' के नाम पर महिलाओं का सामाजिक बहिष्कार प्रस्तावित किया जाता है। मनुस्मृति को मान्यता देते हुए, आर.एस.एस. की विचारधारा, परिवार और राज्य के लिए त्याग की धारणाओं के जरिए, महिलाओं को दबाने और उन पर शासन करने का प्रयास करती है। प्रतिगमनवादी कुलीन और निम्न पूंजीपति महिलाओं के साथ उसने दुर्गा वाहिनी और भारतीय महिला मोर्चा जैसे संगठनों का निर्माण किया है जो 'हिन्दू' रीति–रिवाज, 'हिन्दू' धर्म और 'हिन्दू' राष्ट्र के नकाब में महिला विरोधी और जन विरोधी अभियानों का नेतृत्व करते हैं। ये संगठन अपने मातृ संगठनों, आर.एस.एस., बजरंग दल आदि के साथ दहेज प्रथा को जायज ठहराते हैं, सती का महिमामण्डन करते हैं और साम्प्रदायिक व जातिवादी होने के नाते कट्टर महिला विरोधी हैं, क्योंकि ये मुसलमान महिला के साथ बद्तमीजी और बलात्कार के पक्ष में और उच्च जातियों के पुरुषों द्वारा दलित महिलाओं के बलात्कार के पक्ष में भी बोलते हैं। सती के अलावा, ये बाल–विवाह, डायन प्रथा और देवदासी व्यवस्था जैसे महिला–विरोधी व्यवहारों को प्रोत्साहित और पुन:जीवित करते हैं।

हिन्दू साम्प्रदायिकता के खतरे के साथ धर्म के प्रतिक्रियावादी सार का परिणाम है मुस्लिम धार्मिक कट्टरपंथ का विकास। शरीयत के नाम पर यह महिलाओं के

अधिकारों को काटने का प्रयास करता है, ड्रेस कोड थोपता है और महिलाओं के आवागमन को रोकता है, परिवार में पुरुषों के सामने पूरी तरह झुकने को मान्यता देता है और शिक्षा व रोजगार के महिलाओं के अधिकार को रोकता है। वे महिलाओं का सम्पत्ति पर अधिकार, तलाक और गुजाराभत्ता का भी विरोध करते हैं और लगातार हिन्दू साम्प्रदायिक खतरे का इस्तेमाल करके, गरीब मुसलमान महिलाओं पर अपनी पकड़ मजबूत करते हैं। पर इधर मुस्लिम महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति जागृति बढ़ने लगी है।

हालांकि सभी धार्मिक कट्टरपंथों का निश्चित रूप से खण्डन करना होगा, पर अपने फासीवादी खतरे के साथ हिन्दू साम्प्रदायिकता मुख्य खतरा है, जिसका पूरी तरह पर्दाफाश करना होगा और और मजबूती से उसका विरोध करना होगा।

पिछड़े देशों में, जहां कहीं भी साम्राज्यवाद के हित में होता है, वहां कट्टरपंथी ताकतों के साथ गठजोड़ बनाकर, धार्मिक रीति–रिवाजों को बरकरार रखकर साम्राज्यवाद फलता–फूलता है।

इसलिए क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन को महिलाओं पर धार्मिक कट्टरपंथियों द्वारा पितृसत्तात्मक, प्रतिगमनवादी, साम्प्रदायिक हमले से लड़ना चाहिए।

4. जाति

भारत में जाति–व्यवस्था एक उत्पीड़नकारी संस्था है। वर्गीय शोषण–उत्पीड़न और लिंग–आधारित पितृसत्तात्मक शोषण व उत्पीड़न के अलावा महिलाओं, खासकर मेहनतकश महिलाओं पर जाति–आधारित इस ब्राह्मणवादी जाति–व्यवस्था ने महिलाओं में जाति पदानुक्रम और छूआछूत व भेदभाव को संस्थागत किया ।

विवाह और रिश्तेदारी के सख्त नियमों के साथ जाति व्यवस्था का इस्तेमाल उच्च जातियों ने समाज में अपनी विशेषाधिकार की स्थिति और सामाजिक सम्पत्ति पर अपने एकाधिकार को नियंत्रित करने के लिए किया। एकनिष्ठता के साथ जाति, एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सम्पत्ति हस्तान्तरण की रेखा तय करने का वाहन बन गई।

उच्च जाति के पुरुषों को उत्पीड़ित जातियों की महिलाओं के साथ यौन सम्बन्ध कायम करने की छूट है। यदि कोई उच्च जाति की महिला उत्पीड़ित जातियों के पुरुष, खास करके दलितों के साथ यौन सम्बन्ध बनाती है तो इस मसले को बहुत गंभीरता से लिया जाता है और या तो उस महिला को मार दिया जाता है या फिर

जाति से बाहर कर दिया जाता है। अत: उस महिला के जो भी बच्चे होंगे उन्हें कोई सम्पत्ति नहीं मिलेगी। इससे जाहिर है कि किस तरह से उत्पीड़ित जातियों को उच्च जातियों की सम्पत्ति पर एकाधिकार में हिस्सेदारी की स्वीकृति नहीं है।

सभी उत्पीड़ित महिलाओं में, दलित महिलाएं सबसे ज्यादा उत्पीड़ित हैं और वे सामाजिक क्रम में सबसे नीचे हैं। दलित महिलाएं जिनकी विशाल बहुसंख्या समुदाय के रूप में गरीब व सम्पत्तिहीन है, केवल वर्ग शोषण ही नहीं बल्कि नंगे पितृसत्तात्मक रुख के साथ जाति उत्पीड़न को भी झेलती हैं। वे दलित महिलाएं ही हैं, जो गांवों में यौन छेड़खानी के सबसे भद्दे रूपों और बलात्कार को झेलती हैं, जिन्हें नंगा घुमाया जाता है, 'डायन' कहकर पत्थरों से मार डाला जाता है, उच्च जाति/वर्ग के पुरुषों की वासना को सन्तुष्ट करने के लिए जिन्हें देवदासी बना दिया जाता है और जो जाति व राजकीय हिंसा की लगातार शिकार बनती हैं।

इस तरह जाति एक ऐसी संस्था है जो पितृसत्ता को बढ़ावा देने में मदद पहुंचाती है। यह पितृसत्ता पर पलती है और बदले में पितृसत्ता इस पर पलती है। दोनों का एक सहजीवी रिश्ता है और शोषक-शासकों का वर्ग इन दोनों को सचेत रूप से टिकाए रखता है। वर्ग संघर्ष को तीव्र करने के साथ-साथ जाति व्यवस्था का खात्मा और उसके सबसे क्रूर चेहरे, छुआछूत को नष्ट करना भी क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन की चिन्ता होनी चाहिए।

5. कानून

किसी भी समाज की कानून व्यवस्था, शासक वर्गों की सम्पत्ति की रक्षा करने, इस सम्पत्ति को और एकत्रित करने में रुकावटों को हटाने के लिए और सम्पत्तिविहीनों द्वारा सम्पत्तिवान वर्गों के खिलाफ संघर्षों, आन्दोलनों, बगावतों व विद्रोहों को कुचलने के लिए बनाई जाती है। सामन्ती और पूंजीवादी समाजों के कानून पितृसत्ता को भी बढ़ावा देते हैं। बुर्जुआ कानून, जनवाद के नाम पर बुर्जुआ की तानाशाही को सुनिश्चित करने का केवल एक अन्य माध्यम था। किसी भी बुर्जुआ समाज की कानून व्यवस्था में, ऊपरी चेहरे और सार के बीच यह अन्तरविरोध शामिल रहता है।

महिला सवाल के लिए भी यह सब सच है। दहेज हत्याओं, बलात्कार, पत्नी को पीटना, छेड़खानी, लिंग आधारित यौन उत्पीड़न, अश्लील साहित्य, वेश्यावृत्ति और महिलाओं के व्यापार, सती हत्याएं, बाल-विवाह, फैक्ट्रियों से विवाहित महिलाओं की छंटनी, महिला फैक्ट्री श्रमिकों को काम से निकाल देना, तलाक की प्रक्रिया को निराशाजनक रूप से जटिल और लम्बा बनाना, महिलाओं को सम्पत्ति में हिस्सा नहीं

देना आदि में कानून एक सहभागी साबित हुआ है। नंगे रूप से नाजायज कानून जैसे कानूनी तलाक के पहले शारीरिक सम्बन्ध का अधिकार, जिसका प्रयास पति की यौन जरूरत पूरा करने के लिए महिला को जबरदस्ती तैयार करना है, भी अस्तित्व में हैं।

इसके अलावा तथाकथित 'धर्म की स्वतन्त्रता' ने, जो दैविक पद्धति के रूप में महिला के उत्पीड़न को बरकरार रखती है और जायज ठहराती है, महिलाओं को सम्पत्ति में समान अधिकार की मनाही की है। परिवार के भीतर समान अधिकार, विवाह के उपरांत महिलाओं के रहने के स्थान का फैसला लेने का अधिकार, कुछ के लिए गुजारा भत्ता का अधिकार, कुछ के लिए तलाक का अधिकार और कुछ के लिए गोद लेने के अधिकार इत्यादि पर इसने रोक लगाया है। इसके अनुसार किस समुदाय से महिला आती है, इस पर निर्भर, महिलाओं के अधिकार विभिन्न व्यक्तिगत कानूनों द्वारा नियंत्रित होते हैं और काटे जाते हैं। इस तरह उपरोक्त सारे कानून हालांकि महिलाओं के लगातार संघर्षों की वजह से ही अस्तित्व में आये हैं, पर इन्हें बनाने के पीछे शासक-शोषक वर्गों का उद्देश्य केवल महिलाओं को धोखा देना, उनमें मौजूदा सत्ता के प्रति मोह पैदा करना और उन्हें तथा उनके आन्दोलन को इसमें फँसाकर उन्हें गुमराह करना है। हमें एक तरफ इनका इस्तेमाल कर क्रांतिकारी महिला आन्दोलन और साम्राज्यवाद-सामन्तवाद विरोधी क्रांतिकारी युद्ध में महिलाओं की व्यापक भागीदारी की दिशा में महिलाओं को कदम-ब-कदम ले जाना होगा। दूसरी तरफ हमें इनके खोखलेपन और ढकोसले का पर्दाफाश भी करना होगा। हिन्दू साम्प्रदायिक शक्तियों ने धार्मिक अल्पसंख्यक समाज (मुस्लिम, इसाई) के अस्तित्व को दबाने के लिए समान नागरिक कानून की मांग बुलन्द की है। यह हिन्दू कानून को ही उनपर जबरन लादने का उनका धूर्ततापूर्ण प्रयास है। महिला आन्दोलन को उनकी इस राजनीतिक चाल का विरोध करना होगा और अल्पसंख्यक महिलाओं द्वारा उनके व्यक्तिगत कानूनों में सुधार के प्रयासों का समर्थन करना होगा।

6. मातृत्व

मातृत्व की अवधारणा के केन्द्र में ये धारणाएं हैं कि बच्चे पैदा करना और पालना, महिला की जिन्दगी के मुख्य कार्यभार और गुण हैं। महिला के शरीर की जैविक बनावट के कारण निस्संदेह, पुनः उत्पादन में महिला की एक बड़ी भूमिका है पर मातृत्व इससे यह जोर देने लगता है कि महिला का सामाजिक लक्ष्य ही बच्चे पैदा करना और जिन्दगी भर उनको पालना है।

मातृत्व, जैसे कि आज प्रचलन में है, एक पितृसत्तात्मक अवधारणा है और सामन्तवाद के समूचे काल में खासतौर पर इस पर जोर दिया गया था। 'मातृत्व' की वर्ग पूर्व अवधारणाएं, जो देवी मां की मूर्तियों से स्पष्ट है, पूरी तरह अलग सोच का प्रतिनिधित्व करती हैं। यह महिला की पुन: उत्पादन में विशेष क्षमता और भूमिका के अनुसार, समुदाय में उसके लिए इज्जत और ऊंचे ओहदे का प्रावधान देती थी। बच्चे पैदा करने में महिला की अतिरिक्त जिम्मेवारी एक सामाजिक तौर पर चिन्हित श्रम था और उस समय विद्यमान मातृत्व की अवधारणा उसे दूसरे तरीके से रोकने का प्रयास नहीं करती थी। पर वर्ग समाज में, मातृत्व की अवधारणा, महिला के नजरिए को संकीर्ण करती और समाज में उसकी भूमिका परिवार तक सीमित करती है।

विवाह की एकनिष्ठ व्यवस्था के तहत, प्राकृतिक अर्थव्यवस्था, निजी सम्पत्ति और वर्ग शोषण के माहौल में, किसी भी पुरुष के बेटों की संख्या उसकी सम्पत्ति और ताकत का निश्चित संकेत था।

स्थिति को और बदतर करते हुए, यह नहीं भूला जाना चाहिए कि मातृत्व को तभी मान्यता दी जाती है यदि महिला के बच्चे लड़के हों। जो महिलाएं बच्चे पैदा नहीं कर पाती थीं, उन्हें बांझ घोषित कर दिया जाता था। उनका जीवन एक नरक बन जाता था। पितृसत्तात्मक पूर्वाग्रह के हिसाब से, महिला 'बांझ' होती है और पुरुष नहीं। पितृसत्तात्मक माहौल के कारण, बच्चों का या बेटे का नहीं होना, पुरुषों को दूसरी या तीसरी शादी करने के लिए एक तैयार बहाना दे देता है।

मातृत्व की अवधारणा बुनियादी रूप से उच्च वर्ग की महिलाओं को सामाजिक उत्पादन से अलग करने का काम करती है। और हालांकि उत्पीड़ित वर्ग की महिलाओं की विशाल बहुसंख्या सामाजिक उत्पादन में लगी हुई हैं, पर इस सैद्धान्तिक अवधारणा का विस्तार, अर्थव्यवस्था में उनकी भूमिका को कम करने के लिए हो गया है। उनकी मुख्य भूमिका, परिवार में पत्नी और मां के रूप में देखी जाती है। इस प्रकार मातृत्व की अवधारणा, दोहरी धार का हथियार है जो महिलाओं को गाय बना देती है। उनको परिवार के साथ बांध कर रखती है और साथ ही साथ उनकी प्राथमिक रूप से गृहणी की छवि को सामन्ती और पूंजीवादी, दोनों उत्पादन प्रणालियों में, उन्हें कम मजदूरी देने के लिए घरेलू उत्पादन के जरिए अर्थव्यवस्था में उसके योगदान को नकारने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। इसके आगे, खूब गरिमामय मातृत्व का सिद्धान्त महिलाओं की आंखों में धूल झोंककर बाजार और मुनाफे की अप्रत्यक्ष सेवा में मुफ्त घरेलू मजदूरों के रूप में उनका निरंतर शोषण उनसे छिपा कर रखता है।

इसलिए क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन के लिए यह अनिवार्य है कि वह मातृत्व की इस अवधारणा पर सवाल उठाए जो जिन्दगी में महिला के संघर्ष को बच्चे पैदा करने के उसके कार्यभार और संकीर्ण पारिवारिक दायरे तक गिरा देता है।

7. विधवा, अविवाहित और एकल महिलाएं

पितृसत्ता, खासतौर पर सामन्ती किस्म की, ने विधवाओं, अविवाहित महिलाओं और अकेली महिलाओं के प्रति कट्टर प्रवृत्तियां विकसित कर दी हैं। पूंजीवाद ने इस संदर्भ में कुछ ज्यादा दिखने वाले और उग्र आधार को कुछ छांटा है उसकी उग्रता को कुछ कम किया है। इस तरह उसने इसके स्वरूप में कुछ परिवर्त्तन भले ही किया है, पर अन्तरवस्तु को बरकरार रखा है।

भारतीय महिला का महिला होने के नाते पहले से कम ओहदा, वैधव्य के साथ और ज्यादा गिर जाता है। सती वो समाधान था जो भारतीय सामन्तवाद ने महिलाओं के लिए पैदा किया। महिला को या तो अपने पति की चिता में खुद को फेंक देना होता था या फिर उसके लिए खुदी कब्र में खुद को जिन्दा दफना देना होता था।

पुनःउत्पादन को और इस तरह निजी सम्पत्ति को, स्थापित पितृपक्षी रेखा के अनुसार हस्तांतरित करने को नियंत्रित करने का सती–प्रथा एक क्रूर तरीका थी। इसी उद्देश्य के लिए, ब्राह्मण विधवाओं को गंजा करते थे और उसके आभूषणों, रंग बिरंगे फूलों या कपड़ों से उसे वंचित करते थे। इन्हीं कारणों से सामन्ती काल में तलाक अस्तित्व में नहीं था। विवाह सारी जिन्दगी और उसके बाद तक के लिए था। यह एक चिरस्थाई बंधन था। परन्तु पिछड़ी जातियां, महिलाओं को गंजा नहीं करती थीं, पर विधवाओं के खिलाफ कुछ अन्य भयानक व्यवहार करती थीं। जाति पदानुक्रम के सबसे नीचे की उत्पीड़ित जातियां दोनों में से कुछ भी नहीं करती थी। कारण यह है कि उनके पास हस्तान्तरण करने के लिए सम्पत्ति के रूप में कुछ भी नहीं था। इसलिए दलित और अन्य उत्पीड़ित जातियां भी विधवा पुनःविवाह का प्रचलन था और उनकी एक तलाक संहिता थी।

भारत में सती–प्रथा और विधवा को गंजा करना आम तौर पर फीका पड़ गया है। परन्तु हिन्दू साम्प्रदायिक पुरुष फासीवादी जिन्होंने रूप कंवर को जिन्दा जला दिया, इतिहास के पहियों को वापस घुमाने का प्रयास कर रहे हैं।

पितृसत्तात्मक संस्कृति और पुरुष पूर्वाग्रह अकेली महिला की सारी श्रेणियों – विधवाओं, तलाकशुदा महिलाओं, अविवाहित महिलाओं, पतियों द्वारा छोड़ी गई महिलाओं

– को तंग करता है, खास तौर पर तब और ज्यादा यदि वे अपना जीवन खुद चलाती हैं। स्वतन्त्र जीवन चलाने का उनका प्रयास आम तौर पर बर्दाश्त नहीं किया जाता। बच्चों के साथ या बच्चों के बगैर अकेली महिलाओं के लिए घर किराये पर लेना, सम्पत्ति रखना या पितृसत्तात्मक सामाजिक दबावों से मुक्त जीवन जीना उनके लिए मुश्किल होता है। इस प्रकार की अकेली महिलाओं के चारों ओर बनी पितृसत्तात्मक प्रवृत्ति या तो उनको किसी तरह से यौन समर्पण में और इस प्रकार जहां संभव हो, किसी किस्म की वेश्यावृत्ति में करने की होती है या फिर यदि वे अविवाहित अकेली महिलाएं हैं तो उनका विवाह करा देने की होती है।

काफी शारीरिक और मानसिक यातना के कारण और संबंधित पुरुषों की उदासीनता और गैरजिम्मेवारी के कारण, कई परिवार अकेली महिलाएं चलाती हैं। पर उन्हें सामाजिक और यहां तक कि कानूनी पहचान भी नहीं मिलती है जिसके चलते उन्हें कई समस्याएं झेलनी पड़ती हैं।

अकेली महिलाओं द्वारा झेले जा रहे अतिरिक्त भारों के कारण और इसके बावजूद, उनके साहस और अपने पैरों पर जीने की इच्छा को ध्यान में रखते हुए, क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन को उनकी समस्याओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए और शोषणकारी सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ ऐसी महिलाओं को गोलबंद करना चाहिए।

8. लैंगिक रूढ़िवादिता

लैंगिक भेदभाव ने कुछ स्थाई रूढ़िवादी चरित्रों को निर्मित किया है। जब कोई पुरुष की खूबियों के बारे में सोचता है तो उसे बहादुर, नई खोज करने वाला, खुलकर बोलने वाला, तर्कशील, खुले विचारों वाला होना चाहिए। जब कोई महिलाओं की खूबियों के बारे में सोचता है तो उन्हें दबने वाली, वफादार, शर्मीली, चुपचाप, भावुक, इत्यादि होना चाहिए। पुरूष और महिला की प्रकृति के बारे चली आ रही यह स्थापित मान्यता जिसे ''प्राकृतिक गुण'' के रूप में भी स्थापित किया गया है, दरअसल सामाजिक संस्कृति में पितृसत्ता के प्रभाव को दिखलाती है। पितृसत्ता के खिलाफ राजनीतिक संघर्ष को इस लिंग आधारित रूढ़िवादिता के खिलाफ लड़ना होगा।

यह याद रखा जाना चाहिए कि हालांकि हमने कुछ ज्यादा महत्वपूर्ण मुद्दों को छुआ है। फिर भी यह तालिका पूरी होने से काफी कम है।

लैंगिक पूर्वाग्रह ने हमारी संस्कृति को डुबा दिया है। यह जितना ताकतवर है, उतना ही व्यापक है। महिला आन्दोलन को इन तथा अन्य सवालों का ज्यादा बारीकी

से अध्ययन करना चाहिए, इन सांस्कृतिक लक्षणों का सही सार निकालना चाहिए और इनसे लड़ने के लिए उपयुक्त तरीके और साधन ढूंढ़ने चाहिए।

II पितृसत्ता की यौन नैतिकता

एंगेल्स ने कहा था कि एकनिष्ठ विवाह का अर्थ यौन वफादारी नहीं था। इसके विपरीत, हालांकि पुरुष हमेशा अपनी पत्नी से वफादारी की मांग करता था, पर वह अपनी तरफ से उसे सफलतापूर्वक तोड़ता जाता था।

जब हम पितृसत्ता की यौन नैतिकता की बात करते हैं, तो हमें सबसे पहले उसमें स्पष्ट दोहरे मापदंड को रेखांकित करना चाहिए। पितृसत्ता सैद्धान्तिक और शारीरिक जबरदस्ती से महिलाओं की वफादारी हासिल करने का लगातार प्रयास करती है। महिला का अपने शरीर पर कोई भी अधिकार नहीं है। सभी निजी सम्पत्तियों में वह सबसे ज्यादा निजी समझी जाती है। उसका शरीर उस पुरुष का होता है जो उसके पूरे अस्तित्व और आत्मा का मालिक है। महिला को उसके निर्देशों के अनुसार काम करना होगा। जबकि पुरुषों द्वारा परस्त्रीगमन पर कोई रोक नहीं है और एक स्वाभाविक चीज के रूप में उसे जायज ठहराया जाता है जिसके साथ महिलाओं को समझौता करना चाहिए और हल्ला नहीं करना चाहिए, जबकि महिलाओं द्वारा पराए पुरुष के साथ सम्बन्ध या उसकी झलक मात्र अक्षम्य अपराध है।

असल में सामन्ती यौन नैतिकता हमेशा उस पुरुष को ऊंची इज्जत देती थी जिसके पास सबसे ज्यादा रखैल होती थी। बिना रोक-टोक के और जबरदस्ती यौन सम्बन्ध कायम करना शासक सामन्ती संस्कृति का हिस्सा था। सामन्ती वर्ग की महिलाएं अपने पतियों के यौन सम्बन्धों और हरमों की मौन गवाह थीं। कौमार्य को भी एक बड़ी खूबी के रूप में दिखाया जाता था और आज भी शादी के पहले या कुछ नौकरियों के लिए भी महिला की 'यौन पवित्रता' सुनिश्चित करने के लिए कौमार्य जांच कराई जाती है। दूसरी तरफ, पुरुषों द्वारा विवाह के पहले यौन सम्बन्ध, एक स्वाभाविक आम परिघटना है।

यह सब यौन स्वच्छन्दता के सिद्धान्त को मान्यता देने के लिए नहीं है। क्योंकि यौन स्वछन्दता गहरे अर्थपूर्ण रिश्ते बनाने में गंभीरता और प्रतिबद्धता के स्थान पर अन्ततः महिला और पुरुष, दोनों के शरीरों को बाजार की वस्तु समझती है जो जरूरत से और आनन्द के लिए काम करते हैं।

पर यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि जब तक शादी आपसी प्यार और सम्मान पर आधारित नहीं होगी और जब तक परिवार का ढांचा पितृसत्तात्मक आधार पर है जिसमें महिला अपने पति के हुक्म की गुलाम है, सच्ची समानता और इसलिए आपसी विश्वास और प्यार हासिल नहीं किया जा सकता।

यौन नैतिकता की इस दोहरी बात का एक अन्य अन्धकारमय और घृणित पहलू है सामन्तवाद द्वारा बढ़ावा दी गई और संस्थागत की गई तथा अब पूंजीवाद द्वारा एक काफी मुनाफेदार वैश्विक उद्योग में परिणत वेश्यावृत्ति की नंगी सच्चाई। परिवार में महिला पर सख्त यौन संहिता, समाज में पुरुषों द्वारा परस्त्रीगमन और महिलाओं के बलात्कार के साथ–साथ चलती है। और यह पर्याप्त नहीं होता। मुख्य रूप से उत्पीड़ित वर्गों और जातियों की महिलाएं मुख्यतः सामंतों, अभिजातों और एय्याशों की यौन–लिप्सा को सन्तुष्ट करने के लिए, अपने शरीरों को अर्पण करने या कीमत के लिए बेचने पर मजबूर होती हैं।

देवदासी या बासवी सम्प्रदाय, सामन्ती शासक वर्गों द्वारा संस्थागत किया गया था, जिसमें ब्राह्मणों की कोई छोटी भूमिका नहीं थी। पूजा के उन रूपों को अपना कर जो द्रविड़ मातृपक्षी आदिम साम्यवादी जनजातियों के बीच प्रचलित थीं, बासवी सम्प्रदाय को नई सामाजिक स्थिति में बरकरार रहने की इजाजत दे दी गई। पर अब बासवियों ने अपनी भूतपूर्व सामाजिक इज्जत खो दी है। उत्पीड़ित जातियों से आने वाली बासवियां भगवानों से ब्याह दी जाती थीं।

वस्तु अर्थव्यवस्था के विकास के साथ–साथ, पूंजीवाद के आगमन और उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद द्वारा किए गए विनाश के साथ, बासवी व्यवस्था, संगठित वेश्यावृत्ति के क्षेत्र में शामिल हो गई। साम्राज्यवादी लूट और भारत के सामन्तवाद द्वारा गला घोटने से किसान और दस्तकार जनता और मजदूर वर्ग के परिवारों पर काफी असर पड़ा है। पर्यावरणीय विध्वंस और इस प्रकार के कई अन्य कारणों से लाखों लोग गांवों से विस्थापित हो गए हैं। उनमें से सबको फायदेमंद रोजगार नहीं मिला। ऐसे ग्रामीण परिवारों से नौजवान महिलाओं की एक बड़ी संख्या जिन्दा रहने के लिए अपने शरीरों को बेचने के लिए मजबूर हो जाती हैं। बढ़ते हुए पर्यटक और होटल उद्योगों के साथ, देश में सेक्स पर्यटन और बाल वेश्यावृत्ति भी एक बढ़ती हुई परिघटना बन गई है।

खासतौर पर एकाधिकार पूंजीवाद के विकास के साथ, यौन सम्बन्धों को, जिस प्रकार पहले धर्म था और अब शराब है, जनता का नया अफीम बना दिया गया है। लेनिन ने पूंजीवाद में यौन सम्बन्ध का विवरण दिया है, **"यौन जीवन में बुर्जुआ**

का दुराचारीपन है, सड़न की परिघटना है। सर्वहारा एक उठता हुआ वर्ग है। उसे नशे या उत्तेजक की जरूरत नहीं है। न शराब द्वारा नशे की और न ही यौन अतिशयोक्ति द्वारा।" *(क्लारा जेटकिन द्वारा उद्धरित)।* अश्लील मास मीडिया द्वारा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से पितृसत्ता के सिद्धान्त को बढ़ावा दिया जाना और पुरुष जनता द्वारा इस साझेदारी ने उन्हें यौन का खरीददार बना दिया है।

वेश्यावृत्ति एक प्रक्रिया है जो सम्बन्धित महिलाओं को और परिणामस्वरूप पुरुषों को भी नीच और अमानवीय बना देती है। वेश्यावृत्ति के जाल में फंसे महिलाओं और बच्चों को समाज से कोई राहत या आराम नहीं है, उन्हें निरंतर गुण्डों, भड़वों और पुलिस की ओर से तंग होना पड़ता है। व्यावसायिक रूप से महिलाओं में व्यापार करने वालों के हाथ में संगठित वेश्यावृत्ति की सख्त पकड़ के चलते इनमें से ज्यादातर महिलाएं न कभी भाग सकती है और न ही सभ्य जीवन का सपना देख सकती हैं। इनमें से कई कमउम्र में ऐसी भयंकर बीमारियों से मर जाती हैं जिनके लिए कोई डाक्टरी सहायता नहीं है। इस्तेमाल की हुई और अनचाही, ये समाज का ऐसा कचरा बन जाती हैं, जिनकी कोई परवाह नहीं करता।

क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन को शासक वर्ग और राजसत्ता तथा उनके द्वारा पोषित पार्टियों और पितृसत्ता को वेश्यावृत्ति के कारण के रूप में निशाना बनाते हुए, इस सवाल पर व्यापक प्रचार करना चाहिए। इसका समाधान, जैसा कि कुछ साम्राज्यवादी एजेन्सियां प्रचार करती हैं, नाम बदलकर व्यवसायिक यौन श्रमिक रखकर या वेश्यावृत्ति को कानूनी बनाकर और उसके बाद कुछ डाक्टरी सुविधाएं देकर नहीं है। जब तक महिलाएं खरीदी और बेची जा सकती हैं, इन्सान के रूप में उनकी कोई इज्जत नहीं हो सकती। जबकि वेश्यावृत्ति में महिलाओं की बदतर हालत को सुधारने के लिए और उनके पुनर्वास आदि की मांग पर उनको संगठित करके संघर्ष चलाने चाहिए। साथ ही यौन को उद्योग के रूप में बढ़ावा देने में, राज्य और शासक वर्गों की भूमिका का पर्दाफाश करना चाहिए। परिप्रेक्ष्य होना चाहिए, उस किस्म के सामाजिक आर्थिक ढांचे को ही बदल देना जिससे कि गुजारा चलाने के लिए किसी महिला को कभी भी अपने को अपने शरीर और आत्मा को बेचना नहीं पड़ें।

पितृसत्ता की यौन नैतिकता का एक और पहलू है स्त्री समलैंगिकता। यह पितृसत्तात्मक उत्पीड़न का फल है। उसको विनाशकारी की संज्ञा देते हुए उसे गुनाह समझा जाता है। पर स्त्री समलैंगिकता और अन्यान्य यौन विकृतियों को शासक–शोषकों द्वारा सचेत रूप से साम्राज्यवादी यौन बाजार को बढ़ावा देने और विकृत व सड़ी–गली पतित संस्कृति के प्रसार के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है।

समूचे तौर पर हमें लिंग के बीच समानता के अन्तरवस्तु के साथ एक नव जनवादी संस्कृति को प्रोत्साहित करना चाहिए। सांस्कृतिक मोर्चे पर इस लड़ाई को सही दिशा में आगे ले जाने का कार्यभार भी हमारे सामने रहेगा। महिला मुक्ति के सवाल को नव जनवादी क्रान्ति के हिस्से के रूप में लेते हुए क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन के राजनीतिक, सांगठनिक, आर्थिक व सैनिक कार्यभारों के साथ इसे मिलाकर यह सांस्कृतिक संघर्ष भी पार्टी के अन्दर और बाहर निरन्तर चलाते जाना होगा।

भाग – चार

राजनीति

I महिलाओं के प्रति हिंसा

सभी वर्ग समाजों में महिलाओं पर हिंसा का चरित्र दुहरा होता है। एक तरफ वे, खासकर मेहनतकश महिलाएं क्रूर वर्गीय हिंसा की शिकार होती है। दूसरी तरफ, वे समाज व परिवार में पुरूषसत्ता के अधीन हिंसा का भी शिकार होती हैं। भारत में यह हिंसा तीव्र रूप से महिलाओं के जीवन का अनिवार्य हिस्सा है। जमींदारों, ठेकेदारों, माफिया गिरोहों और दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों के संस्थानों में अफसरों तथा अन्यान्य प्रभुत्वशाली वर्गों एवं उनके लठधरों द्वारा महिलाओं पर निरन्तर हिंसा लादी जाती है। इन शोषक–शासक वर्गों के हितों की रक्षा में राज्य तथा उसकी मशीनरी अर्थात्, पुलिस–मिलिट्री भी महिलाओं, खासकर मेहनतकश महिलाओं पर बर्बर किस्म की हिंसा लादती है।

इस वर्गीय और राज्य के हिंसा के अलावा महिलाएं घर–परिवार व समाज में भी रोज–ब–रोज पुरूष हिंसा का शिकार होती हैं। बेटियों के खिलाफ हो रहे उत्पीड़न, भेदभाव, भ्रूण हत्या, दहेज हत्या, यौन हिंसा, बलात्कार, साथी चुनने पर, खुद विवाह करने पर, अपने जीवन के बारे में खुद निर्णय लेने पर, मारपीट व हत्या तथा रोज–रोज की गाली–गलौज मारपीट व तरह–तरह के उत्पीड़न व अत्याचार आदि घरेलू और सामाजिक हिंसा के, महिलाओं के खिलाफ पितृसत्तात्मक हिंसा के आमरूप हैं। काम पर जानेवाली महिलाएं भी विविध रूप से हिंसा का शिकार होती हैं, जैसे जमींदारों और ठेकेदारों द्वारा महिला मजदूरों पर हिंसा, काम की जगह पर सुपरवाईजर तथा अन्यान्यों द्वारा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष यातनाएं।

इसके अलावा साम्प्रदायिक व जातिगत हिंसा का भी, जो शासक वर्ग के ही औजार हैं, सबसे ज्यादा शिकार महिलाएं ही होती हैं। महिलाओं पर क्रूर हिंसा द्वारा वे उत्पीड़ित समुदाय को अपमानित और बेइज्जत करते हैं।

महिलाओं पर हिंसा की इन सभी किस्मों को राज्य सम्पोषित करता है। कोर्ट–कचहरी, कानून, राज्य मशीनरी, धर्म, मीडिया, शिक्षा–संस्कृति आदि ऊपरी ढांचे के सारे तत्व महिलाओं पर हिंसा को जायज ठहराते हैं। इधर जैसे–जैसे महिलाएं राजनीतिक आन्दोलन विशेष रूप से क्रान्तिकारी आन्दोलन और राष्ट्रीयता आन्दोलन, या फिर अन्य जनसंगठनों में उतर रही हैं, राज्य महिलाओं पर सीमाहीन, क्रूरतम व वीभत्सतम

हिंसा लाद रहा है। इसमें रोज-रोज की गिरफ्तारियाँ, थाने व हाजत में क्रूर यातना, सामूहिक बलात्कार से लेकर हिंसा के ऐसे तौर-तरीके शामिल हैं जिनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

हमें महिलाओं को, खासकर मेहनतकश महिलाओं को महिलाओं पर हिंसा की उपरोक्त सभी किस्मों के खिलाफ गोलबन्द करते हुए वर्तमान राजसत्ता के पितृसत्तात्मक चरित्र का पर्दाफाश करना चाहिए और उनमें यह चेतना विकसित करनी चाहिए कि शासक-शोषक वर्ग और उनका राज्य तथा उनके द्वारा प्रोत्साहित पुरूषसत्तात्मक मूल्यबोध ही इस हिंसा का मूल है। हमें इस प्रतिक्रान्तिकारी हिंसा को हमेशा-हमेशा के लिए मिटाने हेतु क्रान्तिकारी हिंसा के रास्ते पर, अर्थात् लोकयुद्ध और क्रान्तिकारी आन्दोलन के रास्ते पर महिलाओं को आगे बढ़ाने हेतु सचेत प्रयास तेज करने चाहिए।

II राजनीतिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी और पितृसत्ता

वर्ग समाज के उद्‌भव के साथ-ही-साथ शासक-शोषक वर्ग ने ताकत के बल पर मातृसत्ता को उखाड़ फेंका और पुरूष-प्रभुत्व को स्थापित किया। महिलाओं को घर और चूल्हा-चौकी के जेलखाने में धकेल दिया गया और इस तरह उन्हें सामाजिक व राजनीतिक जीवन से बाहर कर दिया गया। इसमें शोषित वर्ग के पुरूषों को भी कुछ विशेषाधिकार दिये गये। इसी बल पर शासक वर्ग को महिलाओं को राजनीतिक जीवन से बहिष्कृत करने में मुख्यत: शोषित वर्ग के पुरूषों का और साथ ही पितृसत्तात्मक विचारधारा से लैस शोषित महिलाओं का भी साथ मिल गया। इसीलिए महिलाओं को सामाजिक-राजनीतिक जीवन में बड़े पैमाने पर शामिल करने हेतु पितृसत्ता से संघर्ष जरूरी है। फिर बड़े पैमाने पर उनकी राजनीतिक भागीदारी वर्गीय व पितृसत्तात्मक शोषण-उत्पीड़न से उनकी मुक्ति के मार्ग को भी प्रशस्त करेगी।

परन्तु पूंजीवाद के विकास और सामाजिक उत्पादन में महिलाओं की बढ़ती हुई भागीदारी के बाद, आम सामाजिक व राजनीतिक जिन्दगी में भाग लेने वाली महिलाओं की संख्या में आनुपातिक वृद्धि हुई। परन्तु ये सारी महिलाएं जो सामाजिक राजनीतिक जीवन में आई हैं, शासक-शोषक वर्गों व पितृसत्ता द्वारा लगातार सताई जाती हैं। इसके अलावा, जो सुधार पूंजीवाद ने स्वीकार किए हैं, वे बुनियादी रूप से निम्न पूंजीपति या अभिजात्य महिलाओं के एक बढ़ते हुए हिस्से के लिए हैं, जिनमें से कई पूंजीवाद के शोषण के लिए न केवल प्रवक्ताओं के रूप में शामिल कर ली जाती हैं

बल्कि श्रमिक वर्ग और किसान महिलाओं पर क्रूरतम वर्गीय शोषण–उत्पीड़न व पितृसत्तात्मक उत्पीड़न के बारे में सचेतन रूप से चुप हो जाती हैं।

18वीं और 19वीं शताब्दियों में भारत में सुधार आन्दोलन ने महिलाओं के मुद्दे उठाये और अंग्रेजी प्रशासन की मदद से कुछ सुधार लाने का प्रयास किया था। इससे शिक्षा व सामाजिक जिन्दगी में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि हुई। 20वीं शताब्दी की शुरुआत में, वे बड़ी संख्या में राजनीतिक क्षेत्र में भी भाग लेने लगीं। वे राजनीतिक पार्टियों में सक्रिय थीं और उन्होंने उस समय के राष्ट्रीय क्रान्तिकारियों और सुभाष चन्द्र बोस की आजाद हिन्द फौज के कार्यों में भाग लिया था। ब्रिटिश–विरोधी आन्दोलन के हिस्से के रूप में लिए गए सभी संघर्षों में वे सबसे आगे थीं। पश्चिम में सफ्रगेट (वोट देने के अधिकार) के आन्दोलन के प्रभाव में कुछ उच्च वर्ग की महिलाओं ने वोट के अधिकारों की मांग करते हुए ज्ञापन भी दिए। परन्तु उपनिवेश–विरोधी आन्दोलन के समय और अगस्त 1947 में सत्ता हस्तान्तरण के बाद भी राजनीतिक अखाड़े में मुख्य भूमिका अदा करने वाली मुख्य शासक वर्गीय पार्टियों के एजेंडे पर पितृसत्ता के खिलाफ राजनीतिक संघर्ष नहीं था। ऐसा इसलिए कि वे खुद शोषक वर्ग की राजनीतिक प्रतिनिधि थीं और अपने वर्गहित में उन्हें पितृसत्ता को संरक्षण देना था। दरअसल उनके नेतृत्व में जारी महिला सुधार आन्दोलनों का असली मकसद महिलाओं को क्रान्तिकारी रास्ते पर जाने से भटका देना और उनका राजनीतिक इस्तेमाल करना है।

हालांकि भाकपा के अन्दर कम्युनिस्ट महिलाओं ने पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष करने का प्रयास किया था, पर इस सवाल पर पार्टी के पास कोई उचित परिप्रेक्ष्य नहीं था। जब पार्टी संशोधनवादी बनी, तब सभी क्रान्तिकारी संघर्षों के साथ–साथ पितृसत्ता के खिलाफ राजनीतिक संघर्ष भी और पीछे चला गया। सीपीएम के दौर में भी ऐसा ही हुआ।

शासक वर्ग की पार्टियों द्वारा महिलाओं की समस्याओं के हल के नाम पर उछाला गया हाल का नारा है 'महिलाओं का सशक्तीकरण'। उनको चुनावी प्रक्रिया का हिस्सा बनाकर और कुछ सीटों पर उनको चुनवा कर वे कहते हैं कि महिलाएं सशक्त हो गई हैं। हालांकि शासक वर्गों के लिए लोगों को संसदीय व्यवस्था के बारे में भ्रम में रखने की घोर जरूरत है, फिर भी उनमें इतनी पितृसत्ता है कि (बाकी कारणों के अलावा) वे पारित किए जाने वाले राजनीतिक अधिनियमों में महिलाओं को 33.3 प्रतिशत प्रतिनिधित्व भी नहीं दे रहे हैं।

दूसरी तरफ सी.पी.आई./सी.पी.एम./माले जैसी संशोधनवादी पार्टियाँ भी नारियों

के लिए काम का अधिकार, शिक्षा का अधिकार, नौकरियों में समानता का अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार, समान काम के लिए समान वेतन आदि मांगों पर सिर्फ सुधारवादी, अर्थवादी, कानूनवादी व संशोधनवादी किस्म के और गांधीवादी किस्म के आन्दोलनों में महिला आन्दोलन को फँसाये रखकर उसे क्रांतिकारी रास्ते पर जाने से रोकने व गुमराह करने का काम करती हैं। फिर शासक वर्ग की बाकी चुनावी पार्टियाँ व इन संशोधनवादी पार्टियों में पितृसत्ता के पहलू भी उल्लेखनीय मात्रा में महिलाओं के राजनीतिक विकास को रोकते व बरगलाते हैं।

हमें इनके ढकोसले का पर्दाफाश करना होगा। हमें बताना होगा कि महिलाओं के वास्तविक सशक्तिकरण के लिए और उनकी समस्याओं के वास्तविक हल के लिए इस पितृसत्तात्मक प्रवृत्ति का पर्दाफाश करते हुए भी, हमारा मुख्य केन्द्रबिन्दु इस व्यवस्था के अन्दर महिला के सशक्तीकरण के ढकोसले का पर्दाफाश करना होना चाहिए। उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण के बिना सच्चा महिला सशक्तीकरण संभव नहीं है। इसके लिए जरूरी होगा कि महिलाएं उत्पादन के साधनों पर मेहनतकशों की मिल्कियत व नियंत्रण के लिए जारी क्रान्तिकारी संघर्षों में हिस्सा लेने के लिए बड़ी संख्या में आगे आएं और राजनीतिक क्षेत्र में पूरी ताकत से आगे बढ़ें। क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन को बड़ी मात्रा में शोषित-पीड़ित महिलाओं को गोलबन्द करते हुए उन्हें अपने आर्थिक और राजनैतिक अधिकारों को प्राप्त करने के लिए क्रान्ति की आवश्यकता को समझाना होगा और उन्हें क्रान्तिकारी आन्दोलन में शामिल करना होगा, इसमें उनकी पहलकदमी बढ़ानी होगी। इसके साथ ही पार्टी को इसके लिए उन्हें भरपूर मौका देने हेतु हमें सभी संगठनों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 50 प्रतिशत तक हो, इसके लिए निरन्तर सचेत प्रयास करने होंगे। पार्टी, फौजी और जनसंगठनों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के साथ-साथ उन्हें क्रमश: ज्यादा ऊँची जिम्मेदारियों का वहन करने के लिए प्रोत्साहित करना, उन्हें इसके लिए भरपूर अवसर देना, भरपूर मदद करना, उनमें इसके लिए काबिलियत का विकास करना और इस तरह उनमें से निरन्तर पार्टी-नेताओं, (महज महिला नेता नहीं) कमांडरों व योद्धाओं को बड़ी संख्या में विकसित करना पार्टी के समक्ष एक फौरी और बेहद महत्वपूर्ण कार्यभार है। इसे महत्व देकर निरन्तर करते जाना होगा। इसके लिए पार्टी में लैंगिक पूर्वाग्रहों का विरोध करना, खासकर पुरूष पूर्वाग्रहों का विरोध करना जरूरी है। महिलाओं को पार्टी व फौज में ज्यादातर ''महिला-कार्यों'' में लगाने, उन्हें कमतर व ''महिला'' समझते रहने के विचारों से लड़ना होगा, दूसरी तरफ महिलाओं में भी महिला-चेतना (साथ ही पुरूष साथियों की पुरूष चेतना) के खिलाफ संघर्ष कर उनमें सर्वहारा चेतना व दृष्टिकोण का विकास करने के निरन्तर सचेत प्रयास

करने होंगे। उनमें वर्ग–चेतना का यह विकास वर्ग–संघर्ष में भाग लेने के जरिए ही संभव है। इसी तरह हम महिलाओं की राजनीतिक पहल खोल सकते हैं और महिलाएं भी वर्गीय शोषण–उत्पीड़न व पितृसत्ता के बंधनों से मुक्त होने की राह पर आगे बढ़ सकती हैं। इस पूरी प्रक्रिया में वर्ग संघर्ष के साथ–साथ और उसके विकास के लक्ष्य को दिमाग में रखते हुए पार्टी के अन्दर व बाहर पितृसत्ता विरोधी संघर्ष भी निरन्तर चलाते रहना होगा।

III महिला आन्दोलन में मुख्य राजनीतिक धाराएं

बुर्जुआ उदार नारीवाद

बुर्जुआ सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से महिला सवाल की समझ बुर्जुआ नारीवाद है। ऐतिहासिक तौर पर बुर्जुआ के विकास के साथ बुर्जुआ नारीवाद अस्तित्व में आया।

यह धारा 18वीं सदी के अन्त में शुरू हुई और 20वीं सदी में भी चलती रही है। जैसे–जैसे पूंजीवादी सम्बंध और उदार बुर्जुआ विचारधारा स्थापित हुए, बुर्जुआ और निम्न बुर्जुआ वर्गों की महिलाएं अपनी स्थिति के बारे में जागृत होने लगीं। मेरी वॉलस्टोनक्राफ्ट जैसी कई महिलाएं महिला सवाल पर लिखने लगीं। उनमें यह बात समझ में आने लगी कि उन्हें राजनीतिक, शिक्षा और सामाजिक क्षेत्र में समानता के लिए संघर्ष करना पड़ेगा। कई उदार चिंतक और दार्शनिक जैसे जे.एस मिल ने भी महिलाओं की अधिकारों के बारे में लिखा और प्रचार किया। इसने एक अभियान का रूप लिया। पहले यूएसए (अमेरिका) में और फिर इंगलैंड और अन्य यूरोपीय देशों में वोट के अधिकार के लिए सफ्रजेट आन्दोलन, 20वीं सदी के शुरुआती दौर में, अल्पकाल के लिए जुझारू हुआ। पर इस पैरवी का कोई फायदा नहीं हुआ। पहले विश्वयुद्ध के बाद, महिलाओं को वोट का अधिकार मिलने के बाद यह धारा लुप्त हो गयी। क्रमश: मजदूर वर्ग की महिलाओं का आन्दोलन और समाजवादी आन्दोलन का विकास हुआ, पर उसका प्रमुख नेतृत्व प्रतिक्रियावादी बन गया। 1960 के दशक में जब विकसित पूंजीवादी देशों में महिला आन्दोलन उभरा तब भी यह उदार विचारधारा प्रभावी रही।

समाजवादी नारीवाद

1960 के दशक तक, महिला बुद्धिजीवियों के एक हिस्से ने, जो मार्क्सवाद के प्रभाव में आया, उदारवादी बुर्जुआ नारीवादियों से खुद को सैद्धान्तिक रूप से अलग

किया और ये 'समाजवादी नारीवादियों' के नाम से जाने गए। परन्तु इन समाजवादी नारीवादियों के एक छोटे हिस्से ने ही सुसंगत रूप से मार्क्सवाद को लागू किया, जबकि बहुसंख्यक हिस्से ने महिलाओं के सवाल पर एक गैर–सर्वहारा सैद्धान्तिक दृष्टिकोण को अपनाया। इसलिए समाजवादी लेबल के बावजूद उनको मोटे रूप से बुर्जुआ नारीवादियों की श्रेणी में डालने की जरूरत है।

समाजवादी नारीवाद ने महिलाओं के सवाल की समझदारी में चार बड़े योगदान दिए।

पहला, घरेलू श्रम का सवाल स्पष्ट रूप से केन्द्रबिन्दु में लाया गया और उसके अध्ययन में राजनीतिक अर्थशास्त्र के मार्क्सवादी सिद्धान्तों का उपयोग किया गया। घरेलू काम में महिलाओं की भूमिका और पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली के पुनरुत्पादन और श्रम शक्ति के पुनरुत्पादन के बीच के रिश्ते और इस तरह इसमें महिलाओं की अहम भूमिका का सैद्धान्तिक रूप से निचोड़ निकाला गया। इसने न केवल मार्क्स के मूल्य के श्रम सिद्धान्त को सशक्त किया बल्कि पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली में महिलाओं के घरेलू श्रम की भूमिका को उचित स्थान दिया।

दूसरा, सामाजिक उत्पादन में महिलाओं की भागीदारी के बारे में सूक्ष्म परीक्षण किया गया और यह देखा गया कि जहां पूंजीवाद बड़े पैमाने पर महिलाओं को सामाजिक उत्पादन में लाया, साथ ही साथ उसने पुरुष और महिला श्रमिकों के बीच एक श्रम विभाजन भी पैदा किया। इस तरह यह साबित हो गया कि पूंजीवाद ने सामाजिक उत्पादन में श्रम के लैंगिक विभाजन को बरकरार रखा और महिलाओं के वेतन को पुरुषों के वेतन से नीचे रखने में इस विभाजन का इस्तेमाल किया गया। यह पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में पितृसत्ता के संस्थागत होने का एक और प्रमाण था। यह विश्लेषण महत्वपूर्ण है क्योंकि यह सामाजिक उत्पादन के क्षेत्र में पूंजीवादी पितृसत्ता का पर्दाफाश करता है। यह न केवल पूंजीवाद के अध्ययन के लिए बल्कि समाजवादी अर्थव्यवस्था में सामाजिक उत्पादन के क्षेत्र में पूंजीवादी पितृसत्तात्मक रिश्तों के कायम रहने की जांच करने के लिए भी एक ढांचा प्रस्तुत करता है।

तीसरा, एंगेल्स के योगदानों से लेकर समाजवादी नारीवाद ने पितृसत्ता की अवधारणा को आगे विकसित किया है। पितृसत्ता का विश्लेषण न केवल उत्पीड़न के एक रूप में बल्कि एक पूर्ण विकसित सामाजिक संस्था के तौर पर किया गया। मार्क्सवादी प्रणाली का उपयोग करके इसे स्पष्ट रूप से एक संस्था के रूप में परिभाषित किया गया जो आधार तथा ऊपरी ढांचे दोनों में काम करती है। इस अनिवार्य समझदारी ने ठोस और सुस्पष्ट रूप से पितृसत्ता को सामाजिक क्रान्ति के एक निशाने के रूप में

केन्द्रित करने में मदद की।

चौथा, राजसत्ता के पितृसत्तात्मक पहलू भी सामने लाए गए।

इन सकारात्मक योगदोनों को गिनती में रखना चाहिए। पर समाजवादी नारीवाद के बुर्जुआ उदभव और बोध भी हैं। ये नकारात्मक प्रभाव हैं और महिलाओं की मुक्ति के लिए इनसे लड़ना चाहिए।

आइए अब बुर्जुआ नारीवाद की कुछ आम प्रवृत्तियों को देखें।

लैंगिक संकीर्णतावाद या लैंगिक एकान्तिकता, बुर्जुआ नारीवाद के आधार में पाया जाने वाला मुख्य पहलू है। यह निम्नलिखित तरीकों में देखा जा सकता है।

1. महिलाओं के उत्पीड़न को सामाजिक व्यवस्था से अलग-थलग देखना। इससे वर्गीय शोषण-उत्पीड़न और पितृसत्ता के विकास के बीच रिश्ता तथा वर्ग संघर्ष के एक हिस्से के रूप में पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष चलाने का कार्यभार ओझल हो जाता है। इस प्रकार के बोध से अनिवार्य रूप से सुधारवाद पैदा होता है।

2. पुरुषों को महिलाओं के निशानों के रूप में देखना। चूंकि पुरुष आम तौर पर महिलाओं के बारे में पितृसत्तात्मक पूर्वाग्रह रखते हैं और महिला घरेलू श्रम के कुछ विशेषाधिकारों का आनन्द लेते हैं, इसलिए पुरुषों को महिलाओं के उत्पीड़न के कारण के रूप में देखा जाता है। वर्गीय शोषण-उत्पीड़न और पुरूष-उत्पीड़न को एक ही पलड़े पर तौला जाता है। दोनों को समान रूप से शत्रु बताया जाता है। यह फर्क नहीं किया जाता कि शासक-शोषक वर्गों से महिलाओं का अन्तरविरोध दुश्मनीमूलक है जबकि पितृसत्ता से दोस्तीमूलक। दोनों दो किस्म के अन्तरविरोधों को हल करने के दो रूख, दो तरीके अपनाने के बजाय एक ही तीव्रता से दोनों के खिलाफ लड़ा जाता है। शासक वर्गों की सेवा करने वाली एक संस्था व विचारधारा के बतौर पितृसत्ता से लड़ने के स्थान पर यह बोध मेहनतकश वर्गों के बीच आपसी लड़ाई को प्रोत्साहित करता है और वास्तविक दुश्मनों के खिलाफ वास्तविक दोस्तों की वर्गीय एकता में दरार डालता है। नतीजतन वर्ग संघर्ष जिसपर कि प्रध ान व केन्द्रीय जोर होना चाहिए, जोर कम हो जाता है और पितृसत्ता विरोधी संघर्ष पर ज्यादा बल दिया जाने लगता है।

3. महिलाओं को एक खण्ड के रूप में देखा जाता है। महिलाओं के विभिन्न वर्गों, खासतौर पर मेहनतकश वर्गों की महिलाओं और शासक वर्गों की

महिलाओं के बीच वर्ग विभाजन और वर्ग अन्तरविरोधों के महत्व को घटा दिया जाता है। आम महिलाओं के आन्दोलन के नाम पर निम्न पूंजीपति और अभिजात्य तबकों की महिलाओं की समस्याओं को विशिष्ट रूप से प्रस्तुत किया जाता है।

4. बुर्जुआ नारीवादियों समेत अच्छी संख्या में समाजवादी नारीवादी मांग करते हैं कि महिलाओं का आन्दोलन कम्युनिस्ट पार्टी के सांगठनिक प्रभाव से अपनी 'स्वायत्तता' और 'स्वतन्त्रता' बचा कर रखे। इस तरह ये महिला आन्दोलन पर सर्वहारा के स्थान पर बुर्जुआ के प्रभाव को सुरक्षित रखना व स्थापित करना चाहते हैं।

बुनियादी रूप से इस विशिष्ट प्रवृत्ति के अलावा, बुर्जुआ नारीवाद के कुछ अन्य आम पहलू भी हैं। इसके हृदय में सुधारवाद है। यह क्रान्ति के विपरीत खड़ा है। अक्सर यह आधार में भी महिला उत्पीड़न को देखने के स्थान पर खुद को केवल ऊपरी ढांचे के पहलुओं का जवाब देने तक सीमित कर लेता है। इसके अलावा, नारीवाद महिला सवाल को व्यक्तिगत बनाने का प्रयास करता है जो महिला के हितों को उसकी घरेलू दुनिया और उससे पैदा होने वाली प्राथमिकताओं तक संकुचित कर देता है।

ये बुर्जुआ नारीवाद द्वारा रखी गई कई अन्य विशेष अभिव्यक्तियां और तर्क हैं। पितृसत्ता और महिला मुक्ति पर समग्र मार्क्सवादी सैद्धान्तिक दृष्टिकोण को तीखा करने और विकसित करने में बुर्जुआ नारीवाद के इन विभिन्न विचारों के साथ सैद्धान्तिक बहस और आन्दोलन की व्यावहारिक मिसालें महत्वपूर्ण हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय महिला आन्दोलन में समाजवादी धारा

जब पूंजीवाद के विकास से, खासतौर पर वोट का अधिकार मांगते हुए बुर्जुआ महिला आन्दोलन का विकास हुआ, उसी समय यूरोप में श्रमिक वर्ग की महिलाओं के बीच एक अन्य धारा विकसित हो रही थी। 19वीं सदी के अन्त और 20 वीं सदी की शुरुआत में समाजवादी पुरुष और महिलाओं ने एक श्रमिक वर्ग महिला आन्दोलन को संगठित करना शुरू किया। इनमें सबसे प्रमुख थीं क्लारा जेटकिन, रोज़ा लक्ज़म्बर्ग, अलेक्सान्डरा कोलनताई, इनेस्सा आरमेंड, क्रुपस्काया और अन्य। वे इस आन्दोलन की सिद्धान्तकार और नेत्री थीं। उन्होंने समाजवादी महिलाओं के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन भी आयोजित किए। फ्रेडरिक एंगेल्स और ऑगेस्ट बेबल ने मार्क्सवादी दृष्टिकोण से

महिला मुक्ति पर किताबें लिखीं जिन्होंने इस आन्दोलन के लिए मार्गदर्शक का काम किया। वे अपने-अपने देशों के वर्ग-संघर्ष व क्रान्तिकारी आन्दोलन का हिस्सा थे।

हालांकि उन्होंने नारीवादियों की सारी बुर्जुआ जनवादी मांगों का, जैसे वोट के अधिकार का, समर्थन किया, पर वे सार्वजनिक मताधिकार के पक्ष में थे। नारीवादियों के अश्वेत महिलाओं और गरीब महिलाओं के खिलाफ पूर्वाग्रह की आलोचना करते हुए उन्होंने श्रमिक वर्ग की महिलाओं की मांगों को भी सामने रखा, जैसा कि 8 घंटा काम, काम के स्थान पर सुविधाएं आदि। उन्होंने बड़ी रैलियां, प्रदर्शन और हड़तालों को संगठित किया और कई मांगें जीतीं। उनको अपनी वर्ग बिरादरी के साथ सारे संघर्षों में हिस्सा लेने के अधिकार के लिए भी संघर्ष करना पड़ा। सर्वहारा पुरुषों को, जो शुरू में उनके साथ जुड़ने में हिचक रहे थे, उनके दृढ़निश्चय के सामने झुकना पड़ा।

जहां बुर्जुआ महिला आन्दोलन केवल श्वेत व उच्च वर्ग महिलाओं के हितों का प्रतिनिधित्व करता था, वहीं समाजवादी महिला आन्दोलन ने बहुत स्पष्ट रूप से खुद को इससे अलग किया। उसने उस सबका प्रतिनिधित्व किया जो जनवादी था और मेहनतकश महिलाओं की बहुसंख्या के हितों की सेवा करता था। समाजवादी महिला आन्दोलन की धारा उन सारे देशों में बहती रही जहां कम्युनिस्ट पार्टियों ने महिलाओं को, शोषणकारी व्यवस्था के खिलाफ समग्र संघर्ष के एक अंग के बतौर पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष में संगठित किया। रूस, चीन, वियतनाम और कोरिया में महिलाओं ने पूर्व क्रान्तिकारी आन्दोलन और पार्टी व सेना में एक प्रमुख भूमिका अदा की। आज तक उन सारे तीसरी दुनिया के देशों में जहां सशस्त्र संघर्ष चल रहा है, 19वीं सदी की समाजवादी महिलाओं की विरासत बरकरार है। हमारा महिला आन्दोलन भी इस विरासत का हिस्सा है।

IV भारत में महिला आन्दोलन में प्रधान प्रवृत्तियां

सामाजिक सुधार आन्दोलन

भारत में, उदारवादी बुर्जुआ प्रवृत्ति, राजा राममोहन रॉय, विद्यासागर, वीरेशलिंगम, और लगभग एकान्तिक रूप से ब्राह्मण जातियों से आने वाले अन्य नेताओं के नेतृत्व में चले शुरुआती सामाजिक सुधार आन्दोलन में अभिव्यक्त होती थी। यह कानूनी व संवैधानिक तरीकों तक सीमित था। यह ब्रिटिश उपनिवेशकों से कानून बदलने की और इस प्रकार महिलाओं की स्थिति सुधारने की बात करता था। यह मुख्य रूप से

सती, बाल विवाह जैसी सामन्ती प्रथाओं के खिलाफ निर्देशित था और इसने विधवा पुनर्विवाह महिलाओं की शिक्षा इत्यादि के लिए अभियान चलाया। इन सुधारों का उद्देश्य मुख्य रूप से उच्च वर्ग की महिलाओं की स्थिति में सुधार लाना था।

19वीं सदी के आखिरी दो दशकों में सामाजिक सुधार आन्दोलन में राष्ट्रवाद को हिन्दू पुनरुत्थानवाद की बराबरी में देखने की प्रवृत्ति प्रकट हुई। इसका प्रतिनिधित्व दयानन्द सरस्वती, विवेकानन्द, रामकृष्ण मिशन और कुछ हद तक ऐनी बेसेन्ट के हिन्दू ऐसोसिएशन ने किया। इन्होंने बाल विधवाओं के पुनर्विवाह को समर्थन दिया पर प्रौढ़ महिलाओं के लिए इसका विरोध किया, महिलाओं की शिक्षा को प्रोत्साहन दिया पर यह कहा कि उनको अच्छी गृहणियों में ढालने के लिए यह है।

1920 के दशक से ब्रिटिश-विरोधी संघर्ष, श्रमिक वर्ग आन्दोलनों, जाति विरोधी और अन्य सामाजिक-राजनीतिक आन्दोलनों में महिलाओं की भागीदारी काफी महत्वपूर्ण रूप से बढ़ गई। उच्च जाति और वर्ग के हिस्सों की उदारवादी महिला सुधारवादियों के नेतृत्व में 1927 में गठित ऑल इण्डिया वूमेन्स एसोशिएशन एक उदारवादी नारीवादी प्रवृत्ति का प्रतिनिधि था। उसके कार्य महिलाओं की बेहतरी के लिए हॉल मीटिंग करने और प्रस्ताव पारित करने तक सीमित थे। उन्होंने निचले वर्गों और धार्मिक अल्पसंख्यकों की महिलाओं को गोलबंद करने का न लक्ष्य रखा था और न ही प्रयास किये थे।

ज्योतिबा फूले, रामास्वामी नाइकर (पेरियर) और अम्बेडकर जैसे उदारवादी बुर्जुआ सुधारवादियों के नेतृत्व में चल रहे जाति-विरोधी आन्दोलनों ने मेहनतकश वर्गों और जातियों की महिलाओं को गोलबंद किया। उन्होंने जातीय ढांचे, ब्राह्मणवाद और पितृसत्ता का विरोध किया, लिंगों की समानता का समर्थन किया और कुछ हद तक एक जनवादी विचारधारा को पोसा। परन्तु वे महिला उत्पीड़न की जड़ों को सामन्ती सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था में नहीं बल्कि हिन्दू धर्म और संस्कृति में देखते थे।

समकालीन प्रवृत्तियां

1960 के अन्त और 1970 की शुरुआत के ऐतिहासिक क्रान्तिकारी संघर्षों में समकालीन महिला आन्दोलन ने आकार लिया। वीरोचित नक्सलबाड़ी उभार ने छात्रों और नौजवानों के साथ महिलाओं, खासकर मेहनतकश महिलाओं की व्यापक जनता को प्रोत्साहित किया और गोलबंद किया। महिलायें, खासकर किसान महिलाएं, उसमें भी भूमिहीन-गरीब किसान महिलाएं बड़े पैमाने पर राजनीतिक आन्दोलनों में भाग

लेने लगीं। पश्चिम के महिला मुक्ति आन्दोलन ने भी भारत में शहरी महिलाओं पर अपना प्रभाव डाला। आपातकाल के बाद व्यापक जनवादी आन्दोलन ने महिला आन्दोलन के सामाजिक आधार को विस्तृत होते देखा। कई राज्यों में कुछ स्वायत महिला संगठन खड़े हो गए और 1980 में एक अखिल भारतीय सम्मेलन आयोजित किया गया। इन महिला संगठनों ने भेदभाव और महिलाओं पर अत्याचार के कुछ मुद्दों समेत परिवार में महिलाओं पर उत्पीड़न पर खुद को केन्द्रित किया। कुछ महिला संगठनों की सफलता ने राजनीतिक पार्टियों के बीच अपने महिला संगठनों को पुनर्जीवित करने या नए संगठनों को स्थापित करने में नई रुचि पैदा की। नारीवादी नेताओं को लेकर एक महिला कमीशन बनाकर, इन महिला संगठनों को और महिलाओं के अध्ययन के लिए फण्ड मुहैया कराके, महिला मुद्दों से सम्बंधित नए कानून लाकर या पुराने कानून बदलकर इत्यादि जैसे तरीकों के जरिए, राज्य इन स्वायत्त महिला संगठनों के नेतृत्व को सहयोजित करने में सफल हो गया।

भारत में महिला आन्दोलन में मुख्य राजनीतिक धाराओं को हम मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में डाल सकते हैं : प्रतिक्रियावादी धारा, सुधारवादी धारा और क्रान्तिकारी धारा।

आर.एस.एस. से कांग्रेस तक, उन सभी महिला संगठनों और संस्थाओं को, जिन्हें शासक वर्ग की पार्टियों ने बनाया है, पहली श्रेणी में लाया जा सकता है। साम्राज्यवाद द्वारा प्रवर्तित गैर सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.) को भी इस धारा में शामिल करना चाहिए। हालांकि इस श्रेणी में विभिन्न शक्तियों और उनके महिला संगठनों के बीच मतभेद हैं और उनमें एक-दूसरे के साथ अन्तरर्विरोध भी संभव है, पर इनमें एक समान पहलू भी है। और वह यह है कि या तो शासक वर्ग इन्हें प्रवर्तित करते हैं या ये महिलाओं को संगठित करके शासक वर्गों की सेवा करना चाहते हैं। इसके आधार में यह राजनीतिक पहलू है जो इस धारा की सभी महिला संस्थाओं के लिए समान है। सबसे ज्यादा प्रतिक्रियावादी धारा वह है जिसका नेतृत्व आर.एस.एस.-भाजपा गठजोड़ कर रहा है। ये हिन्दू राष्ट्रवाद के नाम पर बड़ी संख्या में महिला सेविकाओं को गोलबंद करने का प्रयास कर रहे हैं। नवगठित दुर्गा वाहिनियों का मकसद है हिन्दू राष्ट्रवाद के हितों की रक्षा करना और पितृसत्ता को जारी रखना। इस हिन्दू साम्प्रदायिक धारा के खिलाफ निरंतर और दृढ़प्रतिज्ञ संघर्ष के बिना जनवादी एवं क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन को सशक्त नहीं किया जा सकता है।

सुधारवादी धारा बुनियादी रूप से उन बुर्जुआ नारीवादी संगठनों, जो पितृसत्ता से लड़ते हैं, राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष से जुड़े महिला संगठनों और संशोधनवादी महिला

संगठनों से बनी है। वे आम तौर पर साम्राज्यवादी एजेन्सियों या राज्य से फण्ड लेने को स्वीकार नहीं करते।

इस सुधारवादी धारा में पहली आम तौर पर महिला व्यवसायिकों से संगठित हैं, इसमें अच्छी संख्या में बुर्जुआ नारीवादी और समाजवादी नारीवादी भी हैं; ये एक 'स्वायत्त' महिला आन्दोलन के समर्थक हैं। सुधारवादी धारा के इस हिस्से का सामाजिक आधार मूल रूप से निम्न पूंजीपति है। पर सुधारवादी धारा का यह हिस्सा छोटे ग्रुपों से काम करता है और इसके नेतृत्व में कोई जन-आधारित महिला आन्दोलन नहीं है। इस धारा को बनाने वाला दूसरा हिस्सा राजनीतिक संघर्षों में महिला जनता को गोलबंद कर पाया है और वे आम तौर पर राजनीतिक और सांगठनिक रूप से राष्ट्र मुक्ति आन्दोलनों से बंधे है जो आज भारतीय राजसत्ता के खिलाफ सशस्त्र संघर्ष चला रहे हैं। महिला आन्दोलन में इस हिस्से का बोध और जोर राष्ट्र मुक्ति के लिए लड़ना और इस कार्यभार के लिए महिलाओं को जगाना है। या तो वे पितृसत्ता का बोध नहीं करते और अगर करते हैं, तो वे उस पर जोर नहीं देते।

तीसरा, संशोधनवादी महिला संगठन एक ऐसी प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं जो बुर्जुआ नारीवाद से भिन्न है पर अन्तरवस्तु में समान है। महिला सवाल पर संशोधनवादी पार्टियों की समझ बुनियादी रूप से यांत्रिक और आर्थिक रूप से निर्धारित है।

महिला सवाल के संशोधनवादी बोध में निम्नलिखित खामियां देखी जा सकती हैं।

1) कुछ बुर्जुआ नारीवादियों की तरह, संशोधनवादी भी पितृसत्ता को ऐसी व्यवस्था के रूप में देखते हैं जो केवल ऊपरी ढांचे में है और आधार में काम नहीं करती। इस प्रकार पितृसत्ता के आर्थिक आधार नकार दिये जाते हैं और सारा सवाल पितृसत्ता के खिलाफ सांस्कृतिक संघर्ष तक सीमित हो जाता है।

2) संशोधनवादी विश्लेषण और व्यवहार का मुख्य जोर महिला आन्दोलन को एक संवैधानिक सुधारवादी आन्दोलन तक सीमित करने का है।

3) पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष को यांत्रिक रूप से वर्ग संघर्ष के विपरीत खडा करने की प्रवृत्ति है। और अक्सर, वर्ग संघर्ष के हित के नाम पर, पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष को तो कभी पितृसत्ता विरोधी संघर्ष के हित के नाम पर वर्ग संघर्ष को दुर्बल बना दिया जाता है।

संसदवाद की उनकी लाइन के कारण, महिलाओं को गोलबंद करने को अपने वोट बैंक बढ़ाने के उनके समग्र लक्ष्य के मातहत कर दिया जाता है और इसलिए वे

संघर्षों को संवैधानिक सुधारों और सख्ती से कानूनी दायरे में सीमित करते हैं। क्योंकि संशोधनवादी पार्टियां, शासक वर्गों की सेवा करती है, सुधारवादी कार्यक्रमों की वकालत के बावजूद उनके जन संगठनों को अन्य सुधारवादी संगठनों से फर्क करना चाहिए। जहां हम महिलाओं के समान मुद्दों पर सुधारवादी धारा के महिला संगठनों के साथ संयुक्त कार्यवाही में जाएंगे वहीं संशोधनवादी पार्टियों के महिला संगठनों के साथ संयुक्त कार्यवाही में हमको ज्यादा चुनिन्दा और सर्तक रहना चाहिए।

सुधारवादी व संशोधनवादी धारा के ये सारे हिस्से, बेशक इनके भिन्न बोध हैं, महिलाओं के संघर्ष व आन्दोलनों को सुधारवाद, संसदवाद, कानूनवाद, अर्थवाद व संशोधनवाद के दलदल में फँसाने का काम करते हैं। उसे क्रान्तिकारी रास्ते पर जाने से गुमराह करते हैं। इनमें से कोई भी इस सामाजिक व्यवस्था को निशाना नहीं बनाता जो पितृसत्ता को पोसती है।

तीसरी धारा, जिसे क्रान्तिकारी धारा कहते हैं, के पास दिशानिर्देशक सिद्धांत के रूप में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद है और यह न केवल सामाजिक व्यवस्था के शासक वर्गों को अपना दुश्मन मानती है बल्कि यह भी मानती है कि शासक वर्गों की सेवा के लिए पितृसत्ता इस व्यवस्था के अन्दर निर्मित है। इसलिए यह धारा, शासक वर्गों के खिलाफ अपने संघर्ष के हिस्से के तौर पर मुख्य रूप से श्रमिक वर्ग और किसान महिलाओं से बनी महिलाओं की व्यापक जनता और साथ ही किसानों, मजदूरों, मध्यवर्ग व साम्राज्यवाद-सामंतवाद विरोधी सभी वर्गों को गोलबंद करके शासक वर्गों के खिलाफ संघर्ष करती है। साथ ही साथ इस संघर्ष के एक हिस्से के बतौर पितृसत्ता विरोधी संघर्षों को भी सही दिशा में विकसित करती है।

हमें इन सुधारवादी, संशोधनवादी धाराओं के खिलाफ सिद्धांत और व्यवहार में संघर्ष करना चाहिए। महिला आन्दोलन की इस सुधारवादी-कानूनवादी-गांधीवादी धारा, सिर्फ शांतिपूर्ण संघर्ष की धारा, सिर्फ जुलूस प्रदर्शन, सेमिनार करने वाली परम्परा व धारा के खिलाफ महिला आन्दोलन की क्रांतिकारी धारा अर्थात् जुझारू व क्रान्तिकारी महिला संघर्षों की धारा, नवजनवादी क्रान्ति के लक्ष्य से विकसित हो रहे लोकयुद्ध में और क्रान्तिकारी आन्दोलन में महिलाओं, खासकर मेहनतकश महिलाओं को बड़ी संख्या में उतार देने वाली धारा को आगे बढ़ाना चाहिए। हमें सिर्फ सिद्धांत में ही नहीं बल्कि रोजमर्रे के व्यवहार में सुधारवादी- संशोधनवादी धारा के महिला आन्दोलनों से हमारे आन्दोलनों के स्पष्ट फर्क को सामने लाना चाहिए। हमें रोजमर्रे के व्यवहार में महिला आन्दोलन की दोनों धाराओं के बीच स्पष्ट विभाजन रेखा खींच देनी चाहिए। यह संघर्ष चलाते हुए भी क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन को अन्यान्य

महिला संगठनों के साथ मुद्दा आधारित संयुक्त कार्रवाइयां करने और मोर्चा बनाने की पहलकदमी लेनी चाहिए।

V नव जनवादी महिला आन्दोलन

भारतीय जनवादी क्रान्ति के निशाने, साम्राज्यवाद, बड़े जमींदार और दलाल नौकरशाह पूंजीपति, भारतीय महिलाओं पर वर्गीय शोषण–उत्पीड़न तथा साथ ही पितृसत्तात्मक उत्पीड़न के कर्त्ता भी हैं। इसलिए इन वर्गों और इनकी राजसत्ता के खिलाफ संघर्ष, वर्गीय शोषण–उत्पीड़न व पितृसत्ता के खिलाफ महिलाओं के मुक्ति संघर्ष को भी सम्मिलित करता है। दोनों में निरंतर और जीवंत द्वन्दात्मक रिश्ता है। दूसरे के बिना एक की कल्पना नहीं की जा सकती है। नव जनवादी क्रान्ति के लिए संघर्ष, पितृसत्ता से महिला मुक्ति के लिए नये परिदृश्य खोलता है और पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष, नव जनवादी क्रान्ति को ऊर्जा प्रदान करता है। नव जनवादी क्रान्ति, भारतीय जनता की मुक्ति का अग्रदूत, महिला मुक्ति का निश्चित रास्ता है। पर महिला मुक्ति संघर्ष का नेतृत्व किसको करना चाहिए? जो वर्ग नव जनवादी क्रान्ति का नेतृत्व करता है यानी कि सर्वहारा, उसे अपनी पार्टी, कम्युनिस्ट पार्टी को ही क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन का नेतृत्व करना चाहिए।

भारत की महिला जनता में, महिला श्रमिक सबसे क्रान्तिकारी हिस्से हैं। वे सामाजिक उत्पादन में शामिल हैं और वेतन कमाती हैं जो उनकी चेतना को व्यापक बनाता है और परिवार तथा समाज में उनको एक हद तक आजादी देता है। श्रमिकों के रूप में उनकी बढ़ी हुई चेतना के कारण वे आसानी से एकताबद्ध होती हैं और क्रान्तिकारी महिला संगठन की जरूरत को महसूस करती हैं।

इसके बाद आती है महिला भूमिहीन मजदूर और गरीब किसान। वे सर्वहारा की सबसे नजदीकी और विश्वसनीय दोस्त है और एक साथ, गांव में सबसे ज्यादा संख्या वाली और सबसे क्रान्तिकारी वर्ग है। एक तरफ सर्वाधिक क्रूर व व्यापक वर्गीय शोषण व उत्पीड़न, साथ ही पितृसत्तात्मक उत्पीड़न का तीखापन और स्वयं दृढ़कथन और प्रतिरोध की उनकी क्षमता, उनको महिला मुक्ति के आह्वान की सबसे उत्साही शक्ति बना देता है।

गांव के सेवा करने वाले, दस्तकार और मध्यम किसान वर्ग, महिला आन्दोलन पर अनुकूल प्रतिक्रिया करते हैं। वे खेतिहर या शारीरिक उत्पादक श्रम में भाग लेते

हैं और इस तरह गांव में सामन्त–विरोधी व पितृसत्ता–विरोधी संघर्ष के विश्वसनीय दोस्त हैं।

कस्बों और शहरों में, महिलाएं जो खुद श्रमिक नहीं हैं पर श्रमिक वर्ग के परिवारों की हैं स्वाभाविक तौर पर पुरुष श्रमिकों की कठिन जीवन को बांटती हैं। सर्वहारा के संघर्षों के साथ एकजुटता व्यक्त करने वालों में ये महिलाएं सर्वप्रथम हैं और महिलाओं के क्रान्तिकारी संघर्ष में महिला श्रमिकों का अनुसरण करती हैं।

महिला छात्र समुदाय, महिला बुद्धिजीवियों के जुझारू हिस्से को संगठित करता है। उनकी संख्या हर रोज बढ़ रही है और उनकी आकांक्षा रहती है पितृसत्तात्मक बंधन को तोड़कर, आजाद जीवन जीना। यदि क्रान्तिकारी विचारधारा में सही तरीके से ढाला जाये, तो वे क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन के लिए कैडर शक्ति का अच्छा स्त्रोत बन सकती हैं।

सामाजिक खुलेपन और सामाजिक उत्पादन में अपनी भूमिका के कारण मध्यम वर्गीय महिलाएं, महिला आन्दोलन के लिए सकारात्मक रुख दिखाती हैं। इनमें से बहुसंख्यक, जो मध्यम वर्ग कर्मचारियों के निचले तबके जैसे आंगनबाड़ी प्रशिक्षिकाओं, स्कूल अध्यापिकाओं आदि से बने हैं, क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन में सक्रिय भागीदार के रूप में इनके आगे आने की सम्भावना है। मध्यम वर्गीय महिला कर्मचारियों का ऊपरी हिस्सा और व्यवसायी बुर्जुआ नारीवाद के विकास के लिए सामाजिक आधार उपलब्ध कराते हैं। क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन के साथ उनके सैद्धांतिक मतभेदों के बावजूद, दीर्घकालिक दृष्टि से उनके साथ संयुक्त मोर्चा बनाने की एक संभावना है।

बड़े शहरों में महिला उद्योगपतियों का एक बढ़ता हुआ हिस्सा है। वे हमेशा अपनी महानता में डूबी रहना पसन्द करती हैं और बुर्जुआ नारीवाद का सबसे अच्छा जिन्दा प्रतीक हैं – वे एक साथ बुर्जुआ और नारीवादी हैं। इनमें से एक हिस्सा राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग से है। हालांकि वे महिला (या पुरुष) श्रमिकों का शोषण करती हैं, कभी–कभी ये राष्ट्रीय उद्योगपति महिलाएं एक क्रान्तिकारी भूमिका अदा कर सकती हैं।

धनी किसान वर्ग की महिलायें और शहरी मध्यम वर्ग पुरुषों और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के पुरुषों पर निर्भर महिलायें सामाजिक उत्पादन के किसी भी रूप में हिस्सा नहीं लेती हैं। वे परिवार तक सीमित हैं। हालांकि ये महिलायें क्रान्तिकारी वर्गों से आती हैं और इस तरह नव जनवादी क्रान्ति का सर्मथन करती हैं, फिर भी वे काफी हद तक पितृसत्तात्मक मूल्यों को आत्मसात कर लेती हैं। हिन्दू साम्प्रदायिकतावादी

मातृत्व और सीता जैसी पवित्र पत्नी की अपनी प्रतिक्रियावादी धारणाओं का प्रसार करने के लिए इन पर निर्भर करते हैं। ऐसी महिलाएं परिवार के अन्दर पितृसत्तात्मक प्रभुत्व की शिकार हैं और यदि वे उच्च जाति हिन्दू या दकियानूसी मुसलमान परिवारों से हों तो ऐसा और भी ज्यादा है।

बावजूद इसके क्रान्तिकारी आन्दोलन के उभार के समय यह हिस्सा एक सक्रिय भागीदार हुए बगैर भी क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन को अपनी मजबूत सहानुभूति दे सकता है और उसके प्रचार को ग्रहण कर सकता है।

भारत में उत्पीड़ित महिलाओं का एक अन्य हिस्सा बढ़ती संख्या में वेश्याएं हैं जो महिलाओं पर साम्राज्यवादी हमले की सबसे बुरी शिकार हैं। वे इस समाज और इसके दोहरे मापदण्ड से नफरत करती हैं और उस प्रकार की जिन्दगी से बाहर निकलने के लिए छटपटाती हैं। इसलिए वे भी नव जनवादी क्रान्ति का समर्थन करेंगी जो वेश्यावृत्ति समाप्त करने का वायदा करती है और उनके लिए इज्जत की जिन्दगी सुनिश्चित करती है। कुछ क्रान्तिकारी आन्दोलनों में, उन्होंने एक बहुत बहादुराना भूमिका अदा की थी। हालांकि उनको संगठित करना उतना आसान नहीं है और तुरन्त संभव नहीं हो सकता है, पर क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन को उचित मांगों और नारों के साथ उनके बीच काम करने का प्रयास करना चाहिए।

जमींदार और दलाल पूंजीपति वर्गों की महिलाएं पितृसत्तात्मक पाबंदियों का सामना करती हैं। पर शासक वर्गों के सदस्य के रूप में, वे केवल सामन्ती और साम्राज्यवादी शोषण और भारत की मेहनतकश जनता के उत्पीड़न के जरिये जिन्दा रहती हैं। अति पितृसत्तात्मक मूल्यों को आत्मसात करने की वे पात्र हैं और उनका एक परजीवी चरित्र है। वे क्रान्तिकारी जनता पर दमन की हर कार्यवाही का समर्थन करती हैं। वे भारत की नव जनवादी क्रान्ति की दुश्मन हैं। कुछ बुर्जुआ नारीवादी, ऐसी महिलाओं का केवल महिला हिस्सा देखती हैं पर वर्ग चरित्र नहीं देखतीं। भारतीय नव जनवादी क्रान्ति की प्रेरक शक्तियां, सर्वहारा, किसान, निम्न पूंजीपति और राष्ट्रीय पूंजीपति हैं, जिनमें नेतृत्वकारी वर्ग सर्वहारा वर्ग है । नव जनवादी क्रान्ति का और इसके एक हिस्से के रूप में क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन का भी नेतृत्व सर्वहारा करेगा, जिसका महिला तबका क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन के आगे रहेगा, भूमिहीन और गरीब किसान और आदिवासी महिलाएं उसकी सबसे उत्साही, दृढ़ और बहुसंख्यक भागीदार होंगी, मध्यवर्गीय परिवारों की महिलाएं, छात्राएं, महिला व्यवसायी और मध्यम किसान महिलाएं इसकी विश्वसनीय भागीदार होंगी। मध्यम वर्गों के ऊपरी तबके की गृहणियां, धनी किसान महिलाएं और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग

की महिला उद्योगपति निष्क्रिय पर समर्थक की भूमिका निभायेंगी और इनमें से एक हिस्सा ढुलमुल रहेगा। महिला मुक्ति आन्दोलन, नव जनवादी क्रान्ति की एक महत्वपूर्ण धारा और उसका हिस्सा है। यह नव जनवादी क्रान्ति को सशक्त करता है और बदले में उससे सशक्त होता है।

जनसेना और आधार क्षेत्रों की स्थापना और उनके विस्तार से नव जनवादी क्रान्ति का प्रसार होता है। दूसरे शब्दों में, वर्ग संघर्ष को गहरा करके, समूचे समाज में पितृसत्ता-विरोधी संघर्ष को भी तीखा करने की गुंजाइश खुल जाती है। इसी तरह, सही लक्ष्य व दिशा के साथ समूची सामाजिक व्यवस्था में भी पितृसत्ता विरोधी संघर्ष को तीखा करने से वर्ग संघर्ष का विकास भी तीव्र होता है। नव जनवादी क्रान्ति की दीर्घकालिक प्रक्रिया में, हर चरण, आन्दोलन के घुमाव या मोड़ में, आम राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों से सम्बन्धित और पितृसत्ता-विरोधी राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों के लिए उपयुक्त नारे देने का ध्यान रखना चाहिए। ऐसा करने से ही वर्ग संघर्ष चलाने में महिलाओं का उत्साह, पितृसत्ता से लड़ने और खुद को महिलाओं के रूप में तथा शोषित-उत्पीड़ित वर्ग के रूप में भी मुक्त करने के उनके उत्साह से मेल खा सकेगा। इसी तरह हम पार्टी, फौज और जनसंगठनों एवं संयुक्त मोर्चा संगठनों में भी महिलाओं की भागीदारी को तथा उन्हें योद्धा व नेता के रूप में विकसित व प्रोन्नत करने के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्यभार को पूरा करने की दिशा में सचेत रूप से बढ़ सकेंगे।

नव जनवादी क्रान्ति महिलाओं के लिए क्या लाएगी? यह उन्हें मुक्ति की ओर कैसे ले जाएगी?

"जमीन जोतने वाले की", नव जनवादी क्रान्ति का मूलभूत नारा है। चूंकि महिलाएं खेतिहर श्रमिक शक्ति का अनिवार्य हिस्सा हैं, वे क्रान्ति द्वारा जब्त और वितरित की गई सारी जमीन का आधा हिस्सा प्राप्त करेंगी। इस प्रकार, किसान महिलाओं को, जिन्हें सम्पत्ति पर अधिकार से वंचित रखा जाता है, कम से कम अपने हिस्से की जमीन तो मिलेगी। यह न केवल सामन्तवाद को तोड़ेगा बल्कि सामन्ती पितृसत्ता के पहलुओं में से एक प्रमुख व महत्वपूर्ण पहलू को भी तोड़ेगा।

महिलाओं के लिए समान काम के लिए समान मजदूरी सुनिश्चित की जाएगी। यह नारा अर्द्ध-औपनिवेशिक व अर्द्ध-सामन्ती पितृसत्तात्मक अर्थव्यवस्था के एक मुख्य स्तम्भ का नाश करेगा। सामाजिक उत्पादन में शामिल महिला श्रमिक और भूमिहीन और गरीब किसान महिलाएं, अर्थव्यवस्था में पितृसत्ता की एक बड़ी रुकावट का समाधान कर पाएंगी।

हमने देखा है कि अर्द्ध–सामन्ती अर्थव्यवस्था सामाजिक उत्पादन में महिलाओं की भागीदारी का गला घोंटती और रोकती है। सामन्तवाद का नाश आपसी सहयोग टीमों के रूप में खेतिहर कार्यों में महिलाओं के भाग लेने के लिए व्यापक गुंजाइश खोलेगा। उत्पादक शक्तियों की मुक्ति के परिणामस्वरूप नए ग्रामीण और शहरी उद्योगों का विकास, बड़े पैमाने पर सामाजिक उत्पादन में महिलाओं को ला पाएगा। सामाजिक उत्पादन में खुद कम से कम 50% नौकरियां महिलाओं के लिए सुनिश्चित होंगी और इस प्रकार महिलाओं के आर्थिक जीवन के शीघ्र परिवर्तन की गारंटी होगी।

शहरों में घरेलू काम को निरंतर सहकारिताओं के दायरे में लाया जाएगा और गांवों में आपसी सहयोग उसके निजी घरेलू क्षेत्र से अर्थव्यवस्था के सार्वजनिक क्षेत्र में परिवर्तन की प्रक्रिया की पहल करेगा। ये महिलाओं के संबंध में ज्यादा महत्वपूर्ण आर्थिक बदलावों में से कुछ होंगे।

सांस्कृतिक क्षेत्र में स्वतन्त्र चयन तथा और भी स्वतंत्र तलाक के तरीकों की एक नई और जनवादी विवाह संहिता को कानूनी बनाया जाएगा और लागू किया जाएगा। दहेज प्रथा का खात्मा किया जाएगा। घर में या बाहर महिलाओं पर हर प्रकार की हिंसा से गंभीरता से निबटा जाएगा। परिवार के अन्दर पितृसत्तात्मक अधीनता से उबरने और परिवार का जनवादीकरण करने पर जोर होगा। वेश्यावृत्ति खत्म की जाएगी और भूतपूर्व वेश्याओं को आर्थिक और सामाजिक रूप से पुनर्वासित किया जाएगा। उन्हें एक सम्मानित जिन्दगी सुनिश्चित की जाएगी। सब बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य की जाएगी। पितृसत्तात्मक पूर्वाग्रह से ग्रसित विषय वस्तु के स्थान पर लैंगिक समानता को मान्यता देने वाली विषय–वस्तु लाई जाएगी। सामाजिक उत्पादन में आने वाली अकुशल महिलाओं को दक्षता हासिल करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाएगा जिससे कि दक्षता के आधार पर पुरुष और महिला काम के बीच की खाई को कम किया जा सके। नव जनवादी राज्य जनता की बीमारी के खर्चों को पूरा करने का कार्यभार लेगा। ग्रामीण अस्पताल शुरू करके प्रसव के पहले और प्रसव के बाद की देखभाल सुनिश्चित की जाएगी। इस समय के लिए महिलाओं को वेतनयुक्त छुट्टी मिलेगी।

महिलाओं को राजनीतिक मुख्यधारा में लाया जाएगा जिससे कि इतिहास में पहली बार सामाजिक स्तर पर पुरुषों के साथ संयुक्त रूप से राजनीतिक शक्ति के व्यवहार में उनकी समान भागीदारी सुनिश्चित हो सके। लेनिन ने *'लेटर्स फ्रॉम अफार'* में जो लिखा था, उसे याद करना अच्छा होगा : **"यदि हम सार्वजनिक कामों,**

मिलीशिया, राजनीतिक जीवन में महिलाओं को नहीं लाएंगे, यदि हम महिलाओं को परिवार और रसोई के निर्जीव माहौल से खींचेंगे नहीं, तो असली स्वतन्त्रता सुनिश्चित करना असम्भव होगा, समाजवाद तो छोड़ ही दीजिए, जनवाद का निर्माण भी असम्भव है।"

ये हैं कुछ ज्यादा महत्वपूर्ण आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक बदलाव, जो नव जनवादी क्रान्ति महिलाओं के लिए सुनिश्चित करेगी। पर उपरोक्त बदलावों को हासिल करना एक कठिन प्रक्रिया है। इन बदलावों का प्रतिरोध न केवल प्रतिक्रियावादी सामन्ती और बुर्जुआ वर्गों की ओर से मजबूती से आएगा, बल्कि शोषित जनता का जो हिस्सा इन शोषक वर्गों की विचारधारा व संस्कृति के प्रभाव में रहता है और उसी हिस्से का प्रतिक्रियावादी जनमत प्रतिक्रियावादी वर्गों द्वारा नई व्यवस्था को उखाड़ फेंकने और उनकी पुरातन शोषण-व्यवस्था व महिला-उत्पीड़न की व्यवस्था को पुनर्स्थापित करने के प्रयासों को मदद पहुँचाता है। इसलिए गहराई से जुड़े हुए विचारों, आदतों और संस्कृति को बदलने के लिए आर्थिक क्षेत्र में वर्ग संघर्ष के साथ-साथ सांस्कृतिक क्रान्तियां अनिवार्य हो जाती हैं।

इन महान बदलावों को देखकर हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि नव जनवादी क्रान्ति पूरी तरह पितृसत्ता को खत्म नहीं करेगी। यह सामन्ती पितृसत्ता का विनाश करने में मोटे तौर पर सफल होगी। परन्तु पितृसत्ता की पूंजीवादी किस्म, महिलाओं की समाजवादी समानता के बढ़ते हुए पहलुओं के साथ लड़ती रहेगी। जिस प्रकार नव जनवादी क्रान्ति, समाज के समाजवाद में तब्दील होने के लिए रास्ता तैयार करती है, उसी तरह हम कह सकते हैं कि पितृसत्ता पर हमला करके और उसकी अधिकतर सामन्ती अभिव्यक्तियों और कुछ पूंजीवादी अभिव्यक्तियों को खत्म करके, नव जनवादी क्रान्ति महिलाओं की मुक्ति के लिए आधार बनाती है और रास्ता खोलती है।

जो इस प्रक्रिया को, यानी कि नव जनवादी क्रान्ति और समाजवाद के बीच रिश्ते को और परिणामस्वरूप महिलाओं की मुक्ति के लिए आधार बनाने और सम्पूर्ण मुक्ति हासिल करने के बीच के रिश्ते को, देखने में असफल हैं, वे महिला सवाल को समझने में भटकावों में चले जाते हैं।

नवजनवादी क्रान्ति के लिए वर्ग संघर्ष और महिलाओं का पितृसत्ता-विरोधी नव जनवादी मुक्ति संघर्ष के बीच आपसी सहयोग का रिश्ता है। वे एक-दूसरे को सशक्त करते हैं, पर गलत व्यवहार के परिणामस्वरूप, एक अन्तरविरोध हमेशा पैदा हो सकता है।

यदि पितृसत्ता के खिलाफ पार्टी के अन्दर और बाहर संघर्ष करने के महत्व नहीं देकर या इसके लिए भरपूर गुंजाईश प्रदान किये बिना वर्ग संघर्ष पर एकतरफा बल दिया जाता है (जो एक यांत्रिक या एक 'पुरुष' दृष्टिकोण है) या जब पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष उस बिन्दु के आगे धकेल दिया जाता है जहां वह क्रान्तिकारी वर्गों के पुरुषों और महिलाओं की एकता को प्रभावित करता है (जो एक एकांगी और 'नारीवादी' दृष्टिकोण है) जिससे वर्ग संघर्ष के आगे विकास में बाधा पहुंचती है, तो एक पारस्परिक अन्तरविरोधी स्थिति पैदा हो सकती है। इन दोनों भटकावों से बचना चाहिए। जब एक कम्युनिस्ट पार्टी पहली तरह की गलती को सुधार रही होती है और वर्ग संघर्ष के विकास के हिस्से के तौर पर पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष की पहल लेती है, तब ध्यान रखा जाना चाहिए कि आन्दोलन दूसरे भटकाव की गोद में न चला जाए और इसके विपरीत का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन निम्नलिखित दीर्घकालीन और अल्पकालीन मांगों को संबोधित कर सकता है।

तात्कालिक कार्यभार जिन पर नव जनवादी क्रान्ति के हिस्से के रूप में महिलाओं को गोलबंद किया जाए :

1. चल रहे जनवादी कृषि क्रान्तिकारी संघर्ष के हिस्से के तौर पर गरीब किसानों को वितरित की गई सारी सामन्ती सम्पत्ति में पुरुषों के साथ बराबर का हिस्सा।
2. उत्तराधिकार की या कमाई हुई सम्पत्ति में सभी प्रगतिशील वर्गों की महिलाओं के लिए बराबर हिस्सा।
3. समान काम के लिए समान मजदूरी।
4. काम का अधिकार और शिक्षा व सम्पत्ति का अधिकार।
5. सभी सामंती व पूंजीवादी-साम्राज्यवादी प्रेरित यौन-प्रचार का अन्त और वेश्यावृत्ति तथा समूचे यौन उद्योग का खात्मा।
6. महिलाओं पर पितृसत्तावादियों तथा राज्य द्वारा एवं वर्गीय हिंसा सहित सभी प्रकार की हिंसा का अन्त। इस प्रकार के सभी अत्याचारों के लिए कड़ी सजा देना।
7. दहेज पर प्रतिबन्ध लगाना। तयशुदा, पारम्परिक और खर्चीली शादियों का अन्त करने के लिए संघर्ष। विवाह में मुक्त चयन, साधारण शादियों के लिए मांग और अन्तरजातीय व अन्तरसाम्प्रदायिक शादियों के लिए प्रोत्साहन।

8. राज्य और केन्द्रीय सरकारों में महिलाओं के लिए पर्याप्त नौकरियों के लिए आरक्षण।

9. महिलाओं के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा। सहशिक्षा। सारी साम्प्रदायिक और साम्राज्यवादी विकृतियों का विरोध, जो शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं के खिलाफ भेदभाव करती हैं।

10. गर्भ में महिला भ्रूण को मारने, छोटी बच्चियों की हत्या, महिला विरोधी गर्भ रोकने के तरीकों, लिंग के आधार पर बच्चों के बीच भेदभाव के मामले पर सख्त कार्यवाही।

11. धर्म में महिलाओं के प्रस्तुतीकरण के खिलाफ, हिन्दू फासीवाद सहित सभी किस्म की कट्टरता व साम्प्रदायिकता के खिलाफ, मनुधर्मशास्त्र के खिलाफ, उन व्यक्तिगत कानूनों के खिलाफ संघर्ष जो महिलाओं के खिलाफ भेद-भाव करते हैं।

12. महिलाओं की सारी मीडिया विकृतियों के खिलाफ संघर्ष।

13. आदिवासी और अन्य अल्पसंख्यक समूहों के बीच महिला-विरोधी रिवाजों के खिलाफ अभियान।

14. महिलाओं के लिए व्यापक स्वास्थ्य देखभाल की सुविधाएं और सेवाएं, सभी महिला-विरोधी गर्भ रोकने के तरीकों पर प्रतिबन्ध।

क्रान्ति के बाद के दीर्घकालीन कार्यभार :

नव जनवादी क्रान्ति के बाद हमारी पार्टी के महिला-संबंधी कार्यभारों में निम्न कार्यभार शामिल होने चाहिए :

1. सामाजिक उत्पादन में महिलाओं की पूर्ण भागीदारी यानी सामाजिक उत्पादन में लिंगों के बीच के रिश्तों को बदलना।
2. घरेलू काम का समाजवादीकरण।
3. घरेलू काम में पुरुषों की साझेदारी यानी घरेलू काम के क्षेत्र में लिंगों के बीच के रिश्तों को बदलना।
4. महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी और राजनीतिक शक्ति का संयुक्त व्यवहार।
5. सारी निजी सम्पत्ति का सामूहिकीकरण और पितृसत्तात्मक पारिवारिक व्यवस्था

के खात्मे के लिए संघर्ष। समाजवादी पुरुष महिला रिश्ते को स्थापित करना।

6. निजी घर-आधारित उद्योग और मजदूरी श्रम की समूची व्यवस्था का खात्मा और उसके स्थान पर सामाजिक उत्पादन और स्वामित्व स्थापित करना।
7. विश्व भर में महिलाओं और संघर्षरत लोगों के साथ एकजुटता दिखाना।

VI समाजवादी महिला आन्दोलन

नव जनवादी क्रान्ति से समाजवाद का संक्रमण पूंजीवादी-साम्राज्यवादी व्यवस्था के साथ-साथ पितृसत्ता के खात्मे की संभावनाओं को खोलता है। माओ त्सेतुङ ने कहा है : **''स्त्री पुरूष की सच्ची समानता केवल समूचे समाज के समाजवादी रूपान्तर की प्रक्रिया के दौरान ही प्राप्त की जा सकती है।''** *(चीन के देहातों में समाजवादी उभार)* परन्तु यह नहीं भूला जाना चाहिए कि यह भी एक लम्बी प्रक्रिया है जिसमें सर्वहारा महिलाओं को, समाजवादी निर्माण को आगे बढ़ाने, उसे सुदृढ़ बनाने और पूंजीवाद की पुनर्स्थापना के प्रयासों की रोकथाम करने में अगुआ व सक्रिय भूमिका निभाने के साथ-साथ सामन्ती पितृसत्ता के कुछ अवशेषों और तात्कालिक और ज्यादा व्यापक पूंजीवादी पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष जारी रखकर, एक अहम भूमिका निभानी होगी।

आर्थिक क्षेत्र में समाजवाद, अब तक छिपी और बंधी उस श्रम शक्ति को, जो घर की चारदीवारी के अन्दर मेहनत करती थी, सामाजिक उत्पादन में पूरी तरह व्यस्त करने की संभावना को खोलता है। यह महिलाओं की जिन्दगी में एक तुरन्त और व्यापक रूप से फैला हुआ बदलाव लाता है।

8 मार्च, 1918 को बोलते हुए, लेनिन ने समाजवाद और महिला मुक्ति के बीच रिश्ते को चित्रित किया था : *"प्राथमिक कदम जमीन, फैक्ट्रियों और मिलों के निजी स्वामित्व का खात्मा था। यह निम्न व्यक्तिगत घरेलू अर्थव्यवस्था से बड़े पैमाने की सामाजिक अर्थव्यवस्था में जाकर, यह और केवल यह महिलाओं की पूरी मुक्ति, 'घरेलू गुलामी' से उनकी मुक्ति का रास्ता खोलता है।"* फिर एक अन्य अवसर पर लेनिन ने कहा है : *"महिलाओं की सच्ची मुक्ति, सच्चा साम्यवाद केवल तब और वहां शुरू होगा जब निम्न घरेलू कामों के खिलाफ पुरजोर संघर्ष शुरू होता है (सर्वहारा के नेतृत्व में जिसके पास राजसत्ता है) और या जब उसका एक बड़े पैमाने पर समाजवादी अर्थव्यवस्था में समूचा परिवर्तन शुरू होता है।"* (एक महान शुरुआत)

घरेलू श्रम जो तब तक महिला का भार था, इस तरह परिवर्तित किया जायेगा जिससे कि वह सार्वजनिक समाजवादी अर्थव्यवस्था का हिस्सा बन जाये। यह महिलाओं पर पड़ने वाले भार को काफी कम कर देगा। घरेलू काम को सार्वजनिक क्षेत्र में परिवर्तित करने की सहयोगी भूमिका के बगैर केवल सामाजिक उत्पादन में महिलाओं को लाने पर एकांगी जोर, चीजों को करने का गलत तरीका होगा। यह महिलाओं पर अतिरिक्त भार डालेगा और समाजवाद के लिए संघर्ष में भाग लेने के लिए उनके उत्साह को फीका कर देगा।

सामाजिक उत्पादन के क्षेत्र में, महिलाओं को अकुशल से अर्द्ध-कुशल व कुशल कामों में जाने के लिए प्रशिक्षण उपलब्ध कराने के सचेतन अभियान से (जो खुद अर्थव्यवस्था के औद्योगिकरण की समूची रफ्तार से संबधित है) और सामाजिक उत्पादन में सारे पुरुषों के लिए सुरक्षित स्थानों को तोड़कर, लिंगों के बीच विभाजन को खत्म करना होगा। माओ ने समाजवाद के अन्तरविरोध की बात की थी। यह याद रखा जाना चाहिए कि लिंग आधार पर भी ऐसे अन्तरविरोध दिखेंगे। सभी नौकरियों में 50% महिलाओं को लाने की सचेतन नीति, सुरक्षा देने वाले आरक्षण की नीति, इस कार्यभार का और तेजी से समाधान करने में मदद कर सकती है।

सामन्ती अर्थव्यवस्था में, परिवार उत्पादन और उपभोग दोनों की इकाई है। नव जनवादी अर्थव्यवस्था में धीरे-धीरे वह उत्पादन की इकाई के रूप में वह खत्म हो जाता है जबकि उपभोग की इकाई रहता है। पर समाजवादी अर्थव्यवस्था में, उत्पादन के समाजवादीकरण के साथ, परिवारिक-इकाई :

1) सामाजिक उत्पादन के साथ सारे रिश्ते खो देती है;
2) उपभोग की इकाई के रूप में उसकी भूमिका धीरे-धीरे कम महत्वपूर्ण होती है;
3) घरेलू काम का धीरे-धीरे कम होना, बाकी बचे नाममात्र घरेलू काम पर से, जिसे कि पति-पत्नी के बीच बांटकर किया जाता है, लैंगिक मोहर का अन्त करता है;
4) समाजवाद में, परिवार आधार में होना बन्द कर देता है और एक संस्था बन जाता है जो ऊपरी ढांचे तक सीमित है।

राजनीतिक क्षेत्र में, न केवल कम्युनिस्ट पार्टी को महिलाओं के संबंध में अपनी नीति में इन पितृसत्ता-विरोधी बदलावों का प्रतिबिम्बन करने में सक्षम होना चाहिए, बल्कि महिला मुक्ति के लिए संघर्ष को आगे ले जाने के लिए भी उसे खुद को

तैयार करना चाहिए। अन्य सैद्धांतिक सवालों के अलावा, यह जरूरी है कि हर स्तर पर कम से कम उसकी आधे सदस्य महिलाएं हों।

आगे, सब निर्णय लेने वाली इकाइयों में महिलाओं को बराबर संख्या में उपस्थित होना चाहिए।

इसलिए राजनीतिक काम, एक ऐसा क्षेत्र जो अभी तक महिलाओं के लिए वंचित था, महिला क्षेत्र का 'स्वाभाविक' हिस्सा बनाया जायेगा।

संस्कृति के क्षेत्र में, समाजवादी मूल्यों के प्रसार और दबाने के सारे पितृसत्तात्मक रूपों और पुरुष विशेषाधिकारों के अन्त से, महिलाओं पर से घरेलू श्रम का भार हटाने से और घरेलू काम को बराबरी के आधार पर बांटने से, तयशुदा विवाहों के बजाए चयन से शादियां करने के साथ एकनिष्ठता की संस्था के अस्तित्व में आने के समय से पहली बार सामाजिक स्तर पर परिवार के अन्दर पति और पत्नी का रिश्ता सही मायने में जनवादी आधार पर रखा जायेगा। यह मानना कि समाजवादी चरण के आने के साथ, परिवार एक संस्था के रूप में विघटित हो जायेगा, जैसा कि कुछ नारीवादी कहते हैं, तथ्यपूर्ण नहीं दिखता। बल्कि परिवार बहुत बड़े परिवर्तन का अनुभव करेगा। उसका एकनिष्ठ ढांचा कायम रहेगा पर उसका पितृसत्तात्मक सार खो जायेगा। इस प्रक्रिया में वह एक जनवादी सार हासिल कर चुका होगा और जिसे एंगेल्स ने कहा था न केवल 'पुरुष और महिला का सामंजस्य' बल्कि एकनिष्ठता के आने के समय से पहली बार 'ऐसे सामंजस्य के उच्चतम रूप' को हासिल करेगा। एंगेल्स ने यह सवाल किया और अपने तरीके से जवाब दिया : **"आर्थिक कारणों से पैदा होने वाली एकनिष्ठता क्या उस समय गायब हो जायेगी जब ये कारण गायब हो जायेंगें?"**

"हम, बिना कारण के नहीं, जवाब दे सकते हैं : गायब होने की बात तो दूर, इसके विपरीत, इसका बोध पूरी तरह होगा ... टूटने के स्थान पर एकनिष्ठता आखिरकार एक सच्चाई बनती है – पुरुषों के लिए भी" *(परिवार, निजी सम्पत्ति और राज्य की उत्पत्ति)*

साम्यवाद में परिवार क्या आकार लेगा? एंगेल्स से कुछ ज्ञान उधार लेकर हमें कहना चाहिए : इसके बारे में जितना कम कहा जाये, उतना अच्छा है। इसके बारे में कोई भी अनुमान काल्पनिक ही हो सकता है। जंगली कल्पना को काबू में रखें। भविष्य के साम्यवादी पुरुषों और महिलाओं में अपना विश्वास रखें। और ये विश्वास करें कि परिवार समेत उनकी संस्थायें लैंगिक समानता और साम्यवादी नैतिकता के हितों का सबसे बेहतर तरीके से प्रतिबिम्बन करेंगी।

जब स्वास्थ्य देखभाल, मीडिया विषय वस्तु, शिक्षा, कला, साहित्य और संस्कृति में आगे परिवर्तन होंगे, पुरुष व महिला पूर्वाग्रह और महिलाओं द्वारा पितृसत्तात्मक मूल्यों को आत्मसात करना, दोनों समाज में अपना भौतिक आधार खो देंगे। हर गुजरते दिन के साथ, महिलाओं की अन्तिम मुक्ति और ज्यादा सच होती जायेगी। समय के ऐसे बिन्दु पर, समाज भी साम्यवाद के चरण में जा चुका होगा। समाजवादी परिवर्तन के समय पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष कहना ज्यादा आसान है पर करना नहीं। यह केवल आधार और ऊपरी ढांचे में वर्ग संघर्ष के आगे बढ़ने के साथ ही सम्भव होगा। जिस प्रकार नव जनवादी क्रान्ति के समय में महिला मुक्ति आन्दोलन वर्ग संघर्ष के आगे बढ़ने पर निर्भर करता था और उसमें योगदान करता था, उसी तरह समाजवाद में वर्ग संघर्ष का विकास और विचारों के क्षेत्र में बुर्जुआ के खिलाफ लड़ाई और उत्पादन के क्षेत्र में नौकरशाही की अभिव्यक्ति के खिलाफ संघर्ष, पितृसत्ता-विरोधी संघर्ष को गहरा, सम्पन्न और सशक्त करेगा। यह भूला नहीं जाना चाहिए कि समाज के कुछ दिखने में 'गैर-वर्ग' पहलू जैसे लैंगिक भेदभाव, राष्ट्रीय भेदभाव इत्यादि खास ऐतिहासिक मोड़ों पर समाज में आये हैं और खुद में इनका लक्ष्य नहीं था बल्कि खास ऐतिहासिक युग में उठते हुऐ वर्गों की सेवा करना इनका लक्ष्य था। इसलिए मार्क्सवादी दावा कि समाज में वर्ग के ऊपर कुछ नहीं है, वर्ग विभाजन पर आधारित है। वर्ग विभाजित समाजों में सारी सामाजिक संस्थाएं खास वर्गों के हितों की सेवा करती हैं। इसलिए पूंजीपति का कायम रहना उन संस्थाओं या संस्थाओं के अवशेषों, जिन्होंने पूंजीपति वर्ग को सहारा दिया था जैसे पितृसत्ता, राष्ट्रीय भेदभाव इत्यादि, के कायम रहने के साथ प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित है। इसलिए समाजवादी समाज में पितृसत्तात्मक मूल्यों का जारी रहना केवल यह दिखाता है कि पूंजीपति वर्ग अभी भी जिन्दा है। इस तरह पितृसत्ता के अन्त का पूंजीपति के अन्त से नजदीक का सम्बन्ध है।

सोवियत संघ और चीन में, क्रान्ति की सफलता के तुरन्त बाद, समाजवादी सरकारों ने सारे महिला-विरोधी कानूनो और संवैधानिक प्रावधानों को बदल दिया। महिलाओं को पढ़ने, काम करने, राजनीति में भाग लेने, सामाजिक जिन्दगी और अन्य सारे क्षेत्रों में भाग लेने के पूरे अवसर दिये गये। गर्भपात का अधिकार देने वाला, सोवियत संघ पहला देश था। 30 सालों की प्रक्रिया में समाजवादी समाजों की उपलब्धियां पहले देखी नहीं गई हैं। जो कहते हैं कि समाजवादी समाज भी असफल रहे, वे जानबूझकर इन उपलब्धियों को देखने से इन्कार करते हैं।

पर यह सब पूंजीपति और समाजवादी शक्तियों के बीच चल रहे वर्ग संघर्ष के कारण सम्भव था। जब भी दक्षिणपंथी (पूंजीपति) का हाथ ऊपर हुआ, महिला मुक्ति

का एजेण्डा भी पीछे हट गया। उदाहरण के तौर पर, चीन में ल्यू शाओ-ची ने महिला श्रमिकों को घर जाने के लिए कहा। तर्क यह था – सबके लिए काम के अवसर नहीं थे, इसलिए महिलायें घर में अपने 'समाजवादी' पतियों की सेवा कर सकती हैं और इस तरह नई ऊर्जा के साथ समाजवादी निर्माण में भाग ले सकती हैं। हर क्षेत्र में उन्होंने विकास के पहिये को वापिस घुमाने का प्रयास किया।

फिर जब पार्टी में सही लाइन स्थापित हुई तो महिला मुक्ति का सवाल एजेण्डा पर लाया गया और उसे सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त कदम उठाए गये। सब सामन्ती अवशेषों के खिलाफ तीव्रता से लड़ा गया और पितृसत्ता के खिलाफ इस संघर्ष का नेतृत्व खुद महिलाओं ने किया।

इसलिए पूंजीवाद का पुनरुत्थान भी एक तरफ पितृसत्ता पर निर्भर होकर और दूसरी तरफ नारीवाद पर निर्भर होकर संभव है। समाजवादी देशों को पुनर्स्थापित पूंजीवादी राज्यों की बराबरी में देखना न केवल राजनीतिक रूप से गलत है बल्कि असलियत को भी विकृत करता है। महिलाओं की पूर्ण मुक्ति केवल समाजवाद में वर्ग संघर्ष को जारी रखने के जरिए ही सम्भव है। समाजवाद में वर्ग संघर्ष जारी रखना, माओवाद का एक बड़ा योगदान है। केवल ऐसे सैद्धान्तिक हथियार के साथ महिला जनता पितृसत्तात्मक पाबन्दियों के सारे रूपों का अन्त कर सकती है और अपनी अन्तिम मुक्ति जीत सकती है। ऊपरी ढांचे में पूंजीवादी विचारों पर हमला करने और समाजवादी सुदृढ़ीकरण को आगे बढ़ाने के लिए संस्कृतिक क्रान्तियां महिलाओं से मांग करती हैं कि वे पूंजीवादी विचारधारा व संस्कृति के साथ-साथ पितृसत्ता की सारी अभिव्यक्तियों के खिलाफ तब तक निरंतर क्रान्तिकारी संघर्ष चलायें, जब तक कि पूंजीवादी हित, जिनका वे (पूंजीवादी विचारधारा तथा संस्कृति व पितृसत्ता) प्रतिनिधित्व करती है, अन्तिम और अपरिवर्तनीय रूप से खत्म न हो जाएं और अन्ततः महिलाएं मुक्त न हो जाएं। इसलिए समाजवाद का समय केवल आर्थिक बदलाव और निर्माण का नहीं है। ऐसी सोच अर्थवाद होगी। बल्कि वह पूंजीपतियों को निशाना बनाते हुए सांस्कृतिक क्रान्तियों के कई अन्य पहलुओं के हिस्से के रूप में विशेष रूप से पितृसत्ता-विरोधी पहलू भी है।

VII क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन की सही दिशा

कामरेड लेनिन ने कहा है, **''मेहनतकश औरतों के आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य औरतों की केवल औपचारिक समता के लिए नहीं, बल्कि आर्थिक**

और राजनीतिक समता के लिए लड़ना है। मुख्य काम औरतों को उत्पादक सामाजिक श्रम में खींचना है, उन्हें घरेलू गुलामी से निकालना है, रसोईदारी और धायगिरी के चिरन्तन तथा एकान्तिक वातावरण की हतबुद्धिकर और अपमानजनक ताबेदारी से मुक्त करना है।

यह एक लम्बा संघर्ष है जिसके लिए सामाजिक तकनीक तथा रिवाज दोनों का ही आमूल पुनर्निर्माण आवश्यक है। लेकिन इस संघर्ष का अंत कम्युनिज्म की पूर्ण विजय के साथ होगा।'' (मेहनतकश औरतों के अन्तर्राष्ट्रीय दिवस के उपलक्ष में, 4 मार्च, 1920)।

महिला आन्दोलन की दिशा पर कॉमरेड क्लारा जेटकिन के साथ बातचीत करते समय कॉमरेड लेनिन ने कहा– **''एक स्पष्ट सैद्धांतिक आधार पर हमें शक्तिशाली महिला आन्दोलन का निर्माण करना होगा। जाहिर है कि मार्क्सवादी सिद्धांत के बिना अच्छा व्यावहारिक काम नहीं हो सकता।''**

उपरोक्त शिक्षाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि भारत में भी महिला आन्दोलन की सही दिशा के लिए एक शक्तिशाली सैद्धांतिक आधार यानी, मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद की जरूरत है। उपरोक्त विश्लेषणों से स्पष्ट है कि महिलाओं के वर्गीय व पितृसत्तात्मक शोषण व उत्पीड़न का मूल कारण मौजूदा शोषणमूलक व सड़ी–गली अर्द्धऔपनिवेशिक–अर्द्धसामंती पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था में है। अतएव इस व्यवस्था को उखाड़ फेंककर नव जनवाद, समाजवाद व साम्यवाद के लक्ष्य की ओर आगे बढ़ने के संघर्ष में महिलाओं को शामिल होना पड़ेगा। इस संघर्ष में नारी–पुरूषों द्वारा कंधे से कंधा मिलाकर लड़ने के बजाय अलग–अलग रहकर महिलाओं के लिए न कोई सचमुच का क्रान्तिकारी आन्दोलन चलाना संभव है और न ही वास्तविक महिला मुक्ति की राह पर आगे बढ़ना।

कॉमरेड माओ ने भी क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन की दिशा को निश्चित रूप से समाजवाद व साम्यवाद की ओर बनाये रखने तथा साम्राज्यवाद–सामंतवाद विरोधी नव जनवादी क्रान्ति के एक हिस्से के बतौर इसे आगे बढ़ाने की बात कही है।

अत: अवश्य ही मौजूदा व्यवस्था में महिला मुक्ति का सवाल मजदूरों, किसानों सहित 90 प्रतिशत जनसमुदाय की मुक्ति के साथ जुड़ा हुआ है। मजदूरों की मजदूरी की दासता से मुक्ति के लिए समाजवादी व्यवस्था कायम करने की आवश्यकता है। महिलाओं के उत्पीड़न का अंत और पितृसत्ता का खात्मा भी इससे जुड़ा हुआ है। उसकी पूर्वशर्त्त है साम्राज्यवाद–सामंतवाद विरोधी नव जनवादी क्रान्ति की विजय। इस क्रान्ति की, जिसकी धूरी कृषि क्रान्ति है, सफलता शांतिपूर्ण संसदीय मार्ग से

नहीं, सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में केवल मात्र कृषि क्रान्ति तथा दीर्घकालीन लोकयुद्ध के जरिये ही संभव है। इसलिए इस कृषि क्रान्ति और दीर्घकालीन लोकयुद्ध में तथा इस ओर उन्मुख क्रान्तिकारी आन्दोलनों व अन्यान्य संघर्षों में महिलाओं की भागीदारी ही महिला मुक्ति का एकमात्र रास्ता है। दूसरी तरफ, इससे विरत रहकर या इस दिशा व लक्ष्य से अलग-थलग रहकर महिला मुक्ति के नाम पर चाहे कुछ भी क्यों नहीं किया जाए, इससे महिलाओं की गुलामी की जंजीरे टस से मस होने वाली नहीं है। वह जंजीर वर्गीय शोषण-उत्पीड़न की हो या पितृसत्ता की।

हमें अपने रोजमर्रे के कार्यों में क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन की दिशा को अवश्य ही सही लक्ष्य की ओर बनाये रखना होगा।

XIII एक महिला आन्दोलन के निर्माण में हमारी पार्टी के प्रयास

हमने अभी तक देखा है कि महिला सवाल में क्या आता है। आइये अब, जहां हमने संघर्षों को संगठित किया और उन्हें नेतृत्व दिया है, उन इलाकों में उत्पीड़ित जनता की इन आकांक्षाओं को प्राप्त करने के लिए हमारी पार्टी के प्रयासों और अपनी समझदारी और व्यवहार में कमजोरियों पर संक्षिप्त रूप से अपना ध्यान खींचें।

नक्सलबाड़ी की ज्वाला जो 1960 के दशक के अन्त में देश भर में फैली थी और जिसने भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन में कई दशकों के संशोधनवादी व्यवहार के बाद भारतीय क्रान्ति के लिए सही रास्ता दिखाया था, महिलाओं को भी भारतीय जनता की मुक्ति के लिए संघर्ष में जुड़ने के लिए प्रेरित किया। सात महिलाएं जो प्रसादजोत गांव में मारी गईं थीं, नक्सलबाड़ी संघर्ष के पहले शहीदों में से थीं। अप्रैल 1969 में अपनी स्थापना के बाद से ही हमारी पार्टी की एक प्रमुख धारा के रूप में एम-एल धारा क्रान्तिकारी आन्दोलन में महिलाओं को लाने के लिए सचेतन रूप से प्रयासरत है। एम-एल धारा के साथ-साथ एम.सी.सी. धारा ने भी इस क्षेत्र में निरन्तर कठोर प्रयत्न किये हैं। खासकर आदिवासी महिलाओं में लगे रहकर काम करने के क्षेत्र में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ हासिल हुई हैं। पार्टी, नेता और योद्धा के रूप में लगातार आदिवासी मेहनतकश महिलाएं आगे आई हैं और उन्होंने पार्टी तथा युद्ध का नेतृत्व भी संभाला है। सामंती ताकतों और भारतीय राज्य से लड़ने के दौरान कई महिला कामरेड शहीद हो चुकी हैं। उनमें से हैं का. निर्मला, अक्काम्मा और सरस्वती

जैसी अमर बहनें भी हैं। श्रीकाकुलम के आदिवासी किसानों को संगठित करते हुये और दुश्मन के खिलाफ गुरिल्ला संघर्ष का नेतृत्व करते हुये, उन्होंने साबित कर दिया कि सर्वहारा महिलाएं कितनी काबिल हैं।

1972 में क्रान्तिकारी आन्दोलन को लगे भारी धक्के के बाद, 1980 की शुरुआत से एक बार फिर महिलाएं अच्छी संख्या में आन्दोलन में भाग लेने लगीं। और पिछले दो दशकों में सैकड़ों महिला कामरेडों ने आन्ध्र प्रदेश, दण्डकारण्य, बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा और अन्य स्थानों पर हमारी पार्टी के नेतृत्व में पुरुष कामरेडों के कंधों से कंधा मिलाकर लड़ते हुए, अपनी जिन्दगी न्यौछावर की है। इन कामरेडों के जीवन दृढ़निश्चयपूर्ण और निरंतर संघर्ष से भरे हैं जो इस शोषणमूलक व्यवस्था, उसकी राजसत्ता तथा पितृसत्ता की अपराजेयता का खात्मा करते हैं। वे हमारी पार्टी में आज सभी महिला और पुरुष कामरेडों के लिए और उन सारे सदस्यों के लिए जो आने वाले वर्षों में हमारे साथ जुड़ेंगे, ज्वलंत उदाहरण हैं। उनकी जिन्दगियां साबित करती हैं कि मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद से लैस, केवल कम्युनिस्ट महिलाएं सारे फर्क को मिटा सकती हैं और वह सब हासिल कर सकती हैं जो पुरुषों ने किया है।

1980 दशक के मध्य की शुरुआत से जन संघर्षों में महिलाओं की गोलबंदी बढ़ाने के परिणामस्वरूप, 1980 के बीच में दण्डकारण्य ने हमारे दस्तों में आदिवासी महिलाओं की नियुक्ति देखी। शीघ्र ही वहाँ पार्टी ने क्रान्तिकारी आदिवासी महिला संघ (के.ए.एम.एस.) का निर्माण किया जिसने आदिवासी महिलाओं के कई संघर्ष उठाये और आम मुद्दों पर दण्डकारण्य आदिवासी किसान मजदूर संघ (डी.ए.के.एम.एस.) के साथ एकता बनाई।

के.ए.एम.एस. ने हमारे दस्तों में महिलाओं की नियुक्त इतनी तेज कर दी कि आज दण्डकारण्य में हमारे दस्तों का लगभग एक चौथाई हिस्सा महिला गुरिल्ला योद्धाओं का है।

फिर उधर बिहार–झारखंड में भी पार्टी, फौज तथा विभिन्न जनसंगठनों में मेहनतकश महिलाओं की खासकर आदिवासी महिलाओं की भारी संख्या उभकर आई। ... ... संघ के तत्वाधान में महिला सवालों, उनके वर्गीय व पितृसत्तात्मक शोषण व उत्पीड़न के सवालों पर उल्लेखनीय संघर्षों का बेरोक सिलसिला चलता रहा जिसमें हजारों की संख्या में महिलाएं भाग लेती रहीं। उन्होंने वर्ग संघर्ष के साथ तालमेल करते हुए महिलाओं के क्रान्तिकारी संघर्षों के नायाब उदाहरण पेश किये। ... ... संघ शोषकों–शासकों के लिए सचमुच ही आतंक का पर्याय बन गया है और पार्टी और फौज के लिए

महिलाओं की भर्त्ती का कभी न सूखने वाला एक विशाल स्रोत भी। साथ ही सामंती व पितृसत्तात्मक संस्कृति के खिलाफ, 'डायन' के नाम पर महिलाओं के उत्पीड़न के खिलाफ, अन्यान्य कुसंस्कारों, कुरीतियों व अंधविश्वासों के खिलाफ भी बड़े-बड़े आन्दोलन होते रहे। अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में 8 मार्च का पूरे जोश-खरोश के साथ हर क्षेत्र में महीने भर तक पालन करना और इस महीने को मुक्ति के लिए संघर्षरत महिलाओं के एक विराट महोत्सव में तब्दील कर देना इस क्षेत्र में ... ... संघ की एक बड़ी ऐतिहासिक उपलब्धि है। इस प्रक्रिया के दौर से पार्टी व फौज में महिला नेताओं व योद्धाओं की भारी जमात लगातार निकलती रही। महिलाएं सिर्फ महिला नेता के रूप में ही नहीं, वर्ग संगठन और वर्ग संघर्ष के नेता के रूप में, एक कम्युनिस्ट नेता के रूप में भी विकसित हुईं।

पर हम महिला मोर्चे पर अपनी निरन्तरता को बनाये रखने में तथा पूरी पार्टी में महिला सवाल को मुख्य एजेंडे पर लाने में हर समय हर इलाके में उतना सफल नहीं रहे और इस क्षेत्र में गंभीर कमजोरियाँ बनी रहीं, जो आज भी हैं। फलतः पार्टी, फौज व जनसंगठनों में महिलाओं को भारी संख्या में ला पाने और उनका विकास कर उन्हें नेतृत्वकारी पदों पर प्रोन्नत कर पाने में हम बहुत कम सफल हो पा रहे हैं।

तेलंगाना में जहां हमारा आन्दोलन ज्यादा पुराना है, हमने शुरुआती चरणों में महिलाओं का कोई संगठन नहीं बनाया हालांकि हमारे जन संघर्षों में महिलाएं सक्रिय रही हैं और बड़ी संख्या में नियुक्त हुई हैं। इसने निश्चित रूप से हमारे राजनीतिक काम को नुकसान पहुंचाया और हमारे सशस्त्र संघर्ष के ज्यादा सम्पूर्ण विकास को रोका।

अब, ए.पी., एन.टी., ए.ओ.बी. में हमारा एक महिला संगठन, विप्लव महिला संघम (वी.एम.एस) है। हम कुछ राज्यों में कुछ शहरी महिला संगठन बना पाये हैं, निम्न पूंजीपति और श्रमिक वर्ग की महिलाओं को गोलबंद कर पाये हैं और हमने महिलाओं के बीच काफी क्रान्तिकारी प्रचार भी किया है। इसने इन राज्यों में अच्छा असर डाला और महिलाएं सामने आईं। पर हम अभी कुछ राज्यों में महिला संगठनों और महिला आन्दोलनों के निर्माण में गम्भीर रूप से पीछे हैं। हमें सचेतन और निरंतर प्रयासों से जल्द से जल्द इस कमजोरी को दूर करना होगा।

बिहार-झारखण्ड में हम क्रान्तिकारी आन्दोलन के साथ बड़े पैमाने में महिलाओं को गोलबंद करने के लिए एक सचेतन और निरंतर प्रयास करने में हम उतना सफल नहीं रहे। वे महिला कामरेड, जो पार्टी कैडरों के साथ आईं, पार्टी कैडरों के साथ विकसित नहीं हो पाई और लम्बे समय तक टिक नहीं पाई।

एक शक्तिशाली महिला आन्दोलन के निर्माण में हमारी असफलता, मुख्य रूप से समूचे तौर पर महिला सवाल पर एक समग्र समझदारी के अभाव और खास तौर पर पितृसत्तात्मक उत्पीड़न के खिलाफ लड़ने के महत्व को पहचानने में हमारी विफलता के कारण हैं। इसलिए हमारे मजबूत इलाकों में भी हमने पितृसत्तात्मक उत्पीड़न से सम्बन्धित मुद्‌दों जैसे दहेज, यौन यातना, महिलाओं के खिलाफ हिंसा इत्यादि पर गम्भीर रूप से ध्यान नहीं दिया। हमारे अपने जन संगठनों और हमारे स्थानीय नेताओं के परिवारों में भी पितृसत्ता–विरोधी संघर्ष कमजोर रहा है। इस तरह हम महिलाओं की पितृसत्ता–विरोधी और वर्ग आकांक्षाओं से नव जनवादी क्रान्ति को पर्याप्त रूप से जोड़ नहीं पाये हैं। लम्बे समय तक, जोतने वाले के लिए जमीन की मांग, भूमिहीन महिला जनता की तरफ से नहीं रखी गई थी। इसके अलावा, हमने महिलाओं के लिए पुरुष के समान मजदूरी में सामान्य वृद्धि के लिए शिक्षित करने में असफल रहे कि जब तक ये वर्ग मांगें स्पष्ट रूप से रखी नहीं जायेंगी, सामन्तवाद और साम्राज्यवाद के खिलाफ महिला जनता की पूरी शक्ति को मुक्त नहीं किया जा सकता है, और जब तक वह नहीं किया जायेगा, पितृसत्ता का भी अन्त नहीं किया जा सकता है।

उपयुक्त समय पर महिलाओं की मांगों पर उपयुक्त नारों को देने में हमारी विफलता ने महिला काडरों की नियुक्ति के सम्बन्ध में और पारिवारिक रिश्तों के जनवादीकरण के सम्बन्ध में आन्दोलन को उन इलाकों में प्रभावित किया जहां हमारा आन्दोलन मजबूत है। स्वतः स्फूर्तता और मनोगतवाद के अलावा यह महिला सवाल के बारे में हमारी गहरी समझदारी के अभाव के कारण भी था। हम समय पर समाज और पार्टी में पितृसत्ता की विभिन्न अभिव्यक्तियों को भी चिन्हित नहीं कर पाये। साथ ही हमने पार्टी के अन्दर और बाहर पितृसत्तात्मक विचारों, संस्कृति व मूल्यबोध के खिलाफ पर्याप्त व निरन्तर संघर्ष नहीं चलाया। इसने आन्दोलन के विकास को नुकसान पहुंचाया।

आज पार्टी के सामने मुख्य कार्यभारों में से एक है महिला सवाल पर पार्टी काडरों को शिक्षित करना। महिला सवाल से सम्बन्धित कक्षायें, महिलाओं तक ही सीमित नहीं रखनी चाहिये। महिला सवाल से पुरुषों का भी काफी घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह अनिवार्य है कि संगठनकर्ता के स्तर तक सारे कामरेडों की महिला सवाल पर सही सैद्धांतिक समझ हो जिसके बाद इसे निचले स्तरों तक ले जाया जा सकता है। शिक्षा के इस प्रयास को आत्मालोचनात्मक आत्मनिरीक्षण के साथ जोड़ना अच्छा होगा जिससे कि जो भी पितृसत्तात्मक विचारों या पूर्वाग्रहों के अवशेष बरकरार हों, उन्हें मिटाया जा सके।

इस परिप्रेक्ष्य–पत्र में शामिल समझदारी के साथ इसमें कोई संदेह नहीं है कि हमारी पार्टी महिलाओं के बीच काम के सम्बन्ध में कमजोरियों को दूर करेगी और जारी लोकयुद्ध को आगे बढ़ाने के लक्ष्य व दिशा के साथ एक शक्तिशाली क्रान्तिकारी महिला आन्दोलन के निर्माण में सफल होगी। हजारों शहीदों द्वारा रखे गये महान संघर्षशील परम्पराओं के साथ हमारी पार्टी को भारत की लाखों उत्पीड़ित महिलाओं को नेतृत्व देने का प्रयास करना चाहिए और उन्हें साम्राज्यवादी, सामंती व पितृसत्तात्मक उत्पीड़न के सारे रूपों से खुद को मुक्त करने में उनका नेतृत्व करना चाहिए।

■■■